MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 3

वर्ष 4, अंक 13, जनवरी-2018
पौष, वि. सं. 2074, ₹ 50

# मंगल विमर्श

त्रैमासिक

वादे वादे जायते तत्त्वबोधः

## अंदर के पृष्ठों पर

6-15
**साहित्य कर्म और 'राष्ट्रीय स्व' की अवधारणा**
डॉ कमल किशोर गोयनक

16-23
**निराला कृत राम की शक्तिपूजा की युगानुरूपता**
ओमीश परुथी

24-41
**समसामयिक बौद्धिक विमर्श : पाखंडपूर्ण चिंतन का दंश**
आनन्द आदीश

42-51
**हिंदी का वर्तमान और भावी दिशा**
डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल

52-57
**श्री मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग, श्रीशैलम्**
दामोदर शाण्डिल्य

58-60
**औषधियों का महाराजा घी ग्वार**
डॉ. एस. के. उपाध्याय

मुख्य संरक्षक
डॉ. बजरंगलाल गुप्ता

प्रधान संपादक
ओमीश परुथी

संपादक
सुनील पांडेय

संयुक्त संपादक
डॉ. रवींद्र अग्रवाल

प्रबंध संपादक
आदर्श गुप्ता

प्रकाशक एवं मुद्रक आदर्श गुप्ता द्वारा मंगल सृष्टि, सी-84, अहिंसा विहार, सेक्टर-9, रोहिणी, दिल्ली- 110085 के लिए प्रकाशित एवं एक्सेल प्रिंट, सी-36, एफ एफ कॉम्प्लेक्स, झंडेवाला, नई दिल्ली द्वारा मुद्रित।

RNI
DELHIN/2015/59919
ISSN
2394-9929
ISBN
978-81-935561-1-5

**फोन नं.**
+91-9811166215
+91-11-27565018
**ई-मेल**
mangalvimarsh@gmail.com
**वेब साइट**
www.mangalvimarsh.in

मंगल विमर्श पत्रिका में व्यक्त विचारों के लिए रचनाकार स्वयं उत्तरदायी हैं। संपादक, मुद्रक व प्रकाशक का उनसे सहमत होना अनिवार्य नहीं है।

सभी विवादों का न्याय क्षेत्र केवल दिल्ली होगा।

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 4

# अथ

शब्द ब्रह्म है– 'वाग्वै ब्रह्म'। शब्द शाश्वत है। सकल सृष्टि का प्रकाशक है। संस्कृति व दर्शन का समर्थ संवाहक है। बिना शब्द के किसी भी ज्ञान का प्रस्फुटन, पाठन व श्रवण शक्य नहीं। शब्द ही हमारे उद्‌गारों को रूपाकार देते हैं। मानव-मानव के बीच संवाद स्पंदित करते हैं। सकल सृष्टि में शब्द की व्याप्ति है। भर्तृहरि ने भी कहा है–

शब्दस्य परिणामोऽयभित्याम्नायविदो विदुः

अर्थात् आज ग्रंथों के रचयिताओं ने माना है कि यह समस्त संसार शब्द का ही परिणाम है। शब्द में अनंतशक्ति अंतर्भूत है। 'गायत्री' व 'महामृत्युंजय' जैसे मंत्र इसके प्रमाण हैं। पतंजलि ने इसी शक्ति को पहचानते हुए लिखा है कि एक भी शब्द यदि सम्यक् रीति से सुप्रयुक्त हो, तो वह लोक व परलोक का 'कामधुक्' अर्थात् मनोरथ पूरा करने वाला होता है –

एक शब्दः सत्यम ज्ञातः सुप्रयुक्तः
स्वर्गे लोके च कामधुक भवति ।

*- पातंजल महाभाष्य*

शब्द की महिमा अनंत व अनिवर्चनीय है। वह मानव के आदि रूप से सुसंस्कृत रूप तक की ऊर्ध्वमुखी यात्रा का साक्षी रहा है। साथ ही दीर्घ यात्रा की फल-प्राप्ति का सार्थक संवाहक भी– मानव मन की सूक्ष्म भावनाओं व संवेदनाओं का व्यंजक! अंतस विदारक वेदना से व्याकुल वाल्मीकि को मुक्त करने वाले शब्दों का छंदबद्ध प्रस्फुटन भी। भवभूति की करुणा से सराबोर कराने वाला, तुलसी की समन्वय-साधना का आलेप लगाने वाला, कबीर की चेतावनियों का चाबुक चलाने वाला, दिनकर की राष्ट्रीयता को ओजस्विता प्रदान करने वाला; शब्द ही रहा है। जी हाँ, शब्द ही!

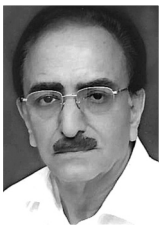

**ओमीश परुथी**
एसोसिएट प्रोफेसर (से.नि.)
प्रधान संपादक

शब्दों में जीवन बदल देने की क्षमता होती है, विश्व में परिवर्तन लाने की शक्ति निहित होती है। गांधी के 'भारत छोड़ों' नारे ने पराधीनता को स्वाधीनता में बदल दिया। 'उठो, जागो और बढ़ो' के उद्‌बोधन द्वारा स्वामी विवेकानंद ने भारतीय युवाशक्ति की तंद्रा तोड़ी, 'एलप्स नहीं है' के उद्‌घोष ने नेपोलियन के सैनिकों को अपूर्व साहसी बना दिया।

यद्यपि शब्द का वैभव, व्याप्ति व विस्तार अनिर्वचनीय है, तथापि कतिपय कवियों ने इसे वाणी देने का प्रयास किया है, यहाँ सामान्य अर्थ के साथ-साथ शब्द प्रभु नाम का भी संकेतक है।

सबदहिं ताला सबदहि कूंची,
सबदहिं सबद जगया।

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 5



सबदहिं सबद सूं परचा हूआ
सबदहि सबद समाया ।।

*– गोरखनाथ*

अपने द्वारा कहे शब्दों की उपयुक्तता व सार्थकता को पहचानने वाले व्यक्ति विरले होते हैं। ऐसे सुधी जनों के विषय में धरनीदास लिखते हैं कि उनके शब्दों को टकसाल से निकले समझना चाहिए–

सब्दु सकल घट उचरे, धरनी बहुत प्रकार।
जो जाने निज सबद को, तासु सबद टकसार।।

शब्दों के सटीक प्रयोग के संदर्भ में महाकवि तिरुवल्लुर ने लिखा है कि किसी शब्द का प्रयोग तब तक करो, जब समझ लो कि दूसरा कोई शब्द इस पर विजय प्राप्त नहीं कर पाएगा, अर्थात् कोई अन्य शब्द उसका स्थानापन्न नहीं कर पाएगा। वास्तव में शब्द की सुप्रयुक्ति व्यक्ति की संस्कारशीलता, संवेदनशीलता व समझ की प्रतीति करवाती है। व्यर्थ का प्रलाप तो कोई भी कर सकता है, जैसाकि आज हमारे समाज में दिखाई देता है।

मानव की सहज वृत्ति है कि वह अपने समाज व राष्ट्र के आदर्श महापुरुषों को अपने अंतस में सम्मानपूर्वक बिठा लेता है। वह उनसे एकात्म हो जाता है। जाने-अनजाने उनकी जीवन शैली को अपने जीवन में अपनाने लगता है। एक समय था जब हमारे समाज के आदर्श महापुरुष राम, भरत, कृष्ण व युधिष्ठिर थे! तब जनसामान्य के जीवन मूल्य अक्षुण्ण थे और भाषा भी मर्यादित एवं परिष्कृत थी। आज की विडंबना है कि रामायण और गीता को जानते-समझते हुए भी हम आज के नेताओं, अभिनेताओं एवं धर्म के पाखंडी मठाधीशों से प्रभावित हुए बिना नहीं रहते। ये वे लोग हैं जो अपने ही शब्दों को स्खलित एवं स्खंदित करते हैं। शब्दों से खिलवाड़ करना उनकी रोजमर्रा की आदत है। संसद से सड़क तक, चुनावी मंचों से चौपाल तक, शब्दों से बदतमीजी करते हुए वे कभी उन्हें सिंहासनारूढ़ करते हैं, कभी उठाकर रसातल की ओर पटक देते हैं, कभी उन्हें पुष्पमालाओं से मंडित करते हैं, कभी कपड़े फाड़ उन्हें निर्वस्त्र कर देते हैं। उनके द्वारा सुबह विश्वासपूर्वक से दिया गया वक्तव्य, शाम होते-होते 'अनुचित संदर्भ में लिया गया' हो जाता है। शब्द उनके विद्रूप चेहरों को देख त्रस्त,पस्त दिखाई देते हैं। इसी संदर्भ में मेरी अपनी कविता का एक अंश द्रष्टव्य है–

यहाँ-वहाँ हर कहीं, बस यही मंजर है–
शब्द किसी के हाथ में पकड़ा पत्थर,
तो किसी के खीसे में छिपा खंजर है।
किसी की मक्कारी मढ़ने की मांड है,
कहीं भीतरी द्वेष पर चढ़ी खांड है।
ये नेता! भूखे! आखरखोर!! शब्दघाती !!!
काली कर दी सरेआम रघुकुल की थाती ।

बीसवीं शताब्दी के एक दार्शनिक ने कहा था कि भाषा आज मनोभावों को छिपाने का साधन बन गई है। इस आकलन में आज की एक भयावह सच्चाई छिपी है। लोग आज वो नहीं बताते जो मन में है, बल्कि जो संभ्रांत समाज में अच्छा लगता है, वही कहते हैं। इस प्रकार अंतस के सत्य को न जुबान पर आने देते हैं, न चेहरे से प्रकट होने देते हैं। भाषा का यह रूप त्रासद है। भाषा भावों को प्रकट करने का माध्यम थी, पर आज का स्वार्थी और धूर्त मानव शब्दों के मनमाने प्रयोग से उन्हें छिपाने में माहिर बन गया है। जो शब्दों का जितना बड़ा जादूगर है, वह आज समाज में उतना ही बड़ा नेता है, अभिनेता है, सेलेब्रिटी है। आज चुनावी मंचों पर अपशब्दों व अभद्र भाषा की प्रतियोगिताएँ होने लगी हैं, जो नैतिकता, सामाजिक समरसता व राष्ट्र गौरव का सरासर तिरस्कार है। माँ शारदा की गरिमा की अवहेलना व अवमानना है, जो शोच्य व त्रासद हैं।

•

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 6

**डॉ. कमल किशोर गोयनका हिंदी के समर्थ समीक्षक व मुंशी प्रेमचंद-साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान हैं। प्रस्तुत आलेख में उन्होंने साहित्यकार की सर्जनात्मकता के रहस्य लोक को उद्‌घाटित करने का प्रयास किया है। उनका मत है कि इस रचना प्रक्रिया में कलमकार का 'स्व' सक्रिय रहता है, लेकिन यह 'स्व' उसकी निजता तक सीमित नही; बल्कि इसमें समाज, संस्कृति, प्रकृति व राष्ट्र उसी प्रकार समाया होता है जैसे बीज में वृक्ष। जो सर्जक राष्ट्रीय 'स्व' व जातीय गौरव को अपनी कृति में रूपायित नहीं कर पाता, उसका साहित्य जीवन - ऊर्जा नहीं दे पाता।**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 7

डॉ कमल किशोर गोयनका

# साहित्य-कर्म और 'राष्ट्रीय स्व' की अवधारणा

साहित्य और साहित्यकार की रचना और मनोरचना, उसकी सृजन-प्रक्रिया, सृजन-कर्म और उसकी सृष्टि के प्रति आरंभ से ही जिज्ञासा का भाव रहा है। संस्कृत, यूनानी, यूरोपीय तथा आधुनिक साहित्यकारों, समीक्षकों तथा दार्शनिकों ने भिन्न-भिन्न प्रकार से उसके रहस्य-सूत्रों एवं प्रक्रियाओं को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है, लेकिन अभी तक कोई साहित्य-कर्म के रहस्यों को जान नहीं पाया है। साहित्य-कर्म अर्थात् साहित्य की रचना का कर्म अज्ञात एवं रहस्यपूर्ण प्रक्रियाओं का पुंज है। यह एक ऐसी संश्लिष्ट प्रक्रिया है जिसके तत्त्वों को अलग-अलग करके समझना और पहचानना एवं उसका विश्लेषण करना अत्यंत कठिन तथा दुःसाध्य कार्य है। एक व्यक्ति क्यों साहित्यकार बनता है, क्यों उसका अंतर्मन उसे बार-बार अभिव्यक्ति के लिए विवश करता है, क्यों वह अभिव्यक्ति के भयानक संकटों तथा असहनीय मानसिक दबावों के बीच रचना में प्रवृत्त होता है, इसका उत्तर दार्शनिकों, मनोवैज्ञानिकों एवं साहित्यकारों ने अपनी-अपनी दृष्टि से दिया है। दार्शनिकों एवं अध्यात्मवादियों का विचार है कि ईश्वर की कृपा से ही कोई व्यक्ति साहित्यकार बन सकता है, अर्थात् साहित्यकार जन्म से ही बनता

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 8

**ईश्वर तथा उसकी सृष्टि जैसे रहस्यपूर्ण है, अपरिभाषेय है, ठीक वैसे ही साहित्यकार तथा उसकी साहित्य-सृष्टि भी किसी परिभाषा में नहीं बाँधी जा सकती। साहित्यकार के मन-मस्तिष्क में रचना का बीजीकरण होता है, बीज कैसे अंकुरित और पल्लवित होता है और यह कैसे वृक्ष बन जाता है, स्वयं रचनाकार के लिए भी इसे बताना कठिन है। हम सब जानते हैं कि एक छोटे बीज में पूरा वृक्ष समाया है, किंतु यह नहीं जानते कि कैसे बीज अपने अंदर समाये अरूप वृक्ष को आकार देता है। साहित्य-कर्म भी इससे भिन्न नहीं है।**

है और साहित्य-सृजन की प्रतिभा ईश्वरीय देन है। फ्रॉयड आदि मनोवैज्ञानिक व्यक्ति के अचेतन और उपचेतन की रहस्यपूर्ण गुफाओं में साहित्य-कर्म की वास्तविकता को खोजते हैं। आधुनिक समाजशास्त्री साहित्यकार के परिवार, शिक्षा, परिवेश, संघर्ष, संस्कार आदि को साहित्यकार बनने की प्रक्रिया में विशेष महत्त्व देते हैं।

वास्तव में, साहित्यकार होने के लिए किसी एक नियम, एक सिद्धांत और एक विचार को स्वीकार कर पाना कठिन है, क्योंकि स्वयं साहित्यकारों ने अपनी जो कथाएँ कही हैं, उनमें एकरूपता नहीं है, बल्कि दो साहित्यकारों की सृजन-प्रक्रिया तथा मनोजगत के विश्लेषण में सामान्य बिंदुओं का मिलना प्रायः कठिन ही है।

ऐसी स्थिति में साहित्य-कर्म अर्थात् साहित्य की सर्जनात्मकता, उसकी सृजनशीलता भी अनेक रहस्यों से परिपूर्ण है। ईश्वर तथा उसकी सृष्टि जैसे रहस्यपूर्ण है, अपरिभाषेय है, ठीक वैसे ही साहित्यकार तथा उसकी साहित्य-सृष्टि भी किसी परिभाषा में नहीं बाँधी जा सकती। साहित्यकार के मन-मस्तिष्क में रचना का बीजीकरण होता है, बीज कैसे अंकुरित और पल्लवित होता है और यह कैसे वृक्ष बन जाता है, स्वयं रचनाकार के लिए भी इसे बताना कठिन है। हम सब जानते हैं कि एक छोटे बीज में पूरा वृक्ष समाया है, किंतु यह नहीं जानते कि कैसे बीज अपने अंदर समाये अरूप वृक्ष को आकार देता है। साहित्य-कर्म भी इससे भिन्न नहीं है। प्रेमचंद ने 'रंगभूमि' उपन्यास के प्रेरणा-सूत्र के बारे में लिखा था कि उन्हें एक अंधे भिखारी से प्रेरणा मिली थी, किंतु यह अंधा भिखारी कैसे इस महाकाव्यात्मक उपन्यास का महानायक बन गया, कैसे वह महात्मा गांधी का प्रतिरूप बनकर अमरत्व प्राप्त कर गया और कैसे सैकड़ों पात्रों का व्यापक संसार और युग का यथार्थ उसकी कथा से संयुक्त हो गया, इन रहस्यों का उद्घाटन करना प्रेमचंद के लिए भी संभव नहीं था।

साहित्यकार साहित्य-कर्म के समय स्रष्टा होता है, बाहर की दुनिया से एकदम निरपेक्ष, अपनी सृजन-प्रक्रिया में खोया हुआ-निमग्न, पूर्णतः अपनी रचना में समर्पित! ऐसी स्थिति में वह रचना के उपकरणों और रहस्यों को जानने के लिए अपनी एकाग्रता तथा साधनावस्था को भंग करने, अपनी अनुभूतियों के आवेग को रोकने और उनके रहस्यों को जानने की सोच भी नहीं सकता और यदि वह ऐसा करता है तो उसकी रचनात्मकता तथा उसकी सृजन-शक्ति की घनीभूतता तो भंग होगी ही, साथ ही उसकी रचना भी कला की ऊँचाइयों तक भी नहीं पहुँच पाएगी। कोई बनावटी और अनाड़ी रचनाकार ही ऐसी गलती करेगा कि रचना को रचना न बनने दे, उसे कला-कृति न बनने दे। रचना और रचनाकार का ऐसा रिश्ता है कि रचनाकार अपनी रचना और रचना-कर्म में इतना घुल-मिल जाता है कि रचना के क्षणों में दोनों एकाकार हो जाते हैं और इन क्षणों में किसी भी प्रकार का विश्लेषण-परीक्षण संभव नहीं है। प्रत्येक रचनाकार इसे अनुभव

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 9



से सीखता है कि साहित्य-रचना के समय किसी भी प्रकार का अवरोध तथा हस्तक्षेप उसकी सृष्टि को छिन्न-भिन्न कर सकता है, अतः वह रचनामय हो जाता है और रचना उसका प्रतिरूप बन जाती है।

साहित्यकार की इस मनोरचना में उसके 'स्व' की पहचान का प्रश्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, बल्कि यह कहना उचित होगा कि साहित्यकार तथा उसका साहित्य दोनों ही इस 'स्व' के कारण ही अपनी अलग पहचान बनाते हैं, उसका यह 'स्व' ही उसे विशिष्टता प्रदान करता है और सच तो यह है कि वह अपने इस 'स्व' के कारण ही साहित्यकार बनता है।

साहित्यकार का यह 'स्व' उसका अपना है, यह उस तक सीमित है, परंतु इसमें असीमित दुनिया, सभी दृश्य-अदृश्य तथा ज्ञात-अज्ञात दुनिया समाई रहती है। यह ऐसा ही है, जैसे पिंड में ब्रह्मांड समाया रहता है। इस प्रकार लेखक का 'स्व' उसकी निजता तक सीमित नहीं है, बल्कि यह निजता बाहरी दुनिया को अपने में समा लेती है, उसे अपना हिस्सा बना लेती है। अतः जो साहित्यकार केवल निजी संवेदनाओं तक सीमित रहता है और अपने ही सुख-दुख का राग आलापता है, वह साहित्यकार की संज्ञा को सार्थक नहीं करता और साहित्य में भी उसकी गणना नहीं होती। वह अपने जीवन-काल में ही काल का ग्रास बन जाता है। यह कुछ विचित्र ही है कि साहित्यकार होने के लिए उसकी 'स्वगत-निजता' अनिवार्य है, किंतु जब तक इस निजता में अन्य जीव-सृष्टि का समावेश नहीं होता, तब तक वह साहित्यकार कहलाने का अधिकारी नहीं होता। इसलिए साहित्यकार को केवल अपनी निजी संवेदनाओं तक सीमित रहना नहीं होता, उसे संपूर्ण मानव एवं जीव-सृष्टि तथा प्रकृति के प्रति संवेदनशील होना होता है। इस प्रकार उसके 'स्व' का यह विस्तार ही उसे संपूर्ण जीव-सृष्टि का साहित्यकार बनाता है।

साहित्यकार का यह 'स्व' अभिव्यक्ति से पूर्व अनेक प्रकार के दबावों से घिरा रहता है। ये दबाव निजी और सामाजिक, दोनों प्रकार के हो सकते हैं। निजी दबावों में साहित्यकार के अपने संस्कार, मर्यादाएँ, विचार आदि उसकी अभिव्यक्ति को नियंत्रित कर सकते हैं और सामाजिक दबाव भी उसे एक सीमा से आगे जाने से रोक सकते हैं, लेकिन साहित्यकार यदि अपने 'स्व' की अभिव्यक्ति ईमानदारी के साथ करना चाहता है तो उसे कई बार 'अकेला' ही चलना पड़ता है और कबीर के शब्दों में अपने घर को जलाने के लिए तत्पर होना पड़ता है– *'कबिरा खड़ा बजार में, लिए लुकाठी हाथ, जो घर जारे आपना, चले हमारे साथ।'*

इस प्रकार साहित्यकार के सम्मुख अभिव्यक्ति का जो संकट रहता है, वह उसकी 'स्व' की चेतना के

**साहित्यकार को केवल अपनी निजी संवेदनाओं तक सीमित रहना नहीं होता, उसे संपूर्ण मानव एवं जीव-सृष्टि तथा प्रकृति के प्रति संवेदनशील होना होता है। इस प्रकार उसके 'स्व' का यह विस्तार ही उसे संपूर्ण जीव-सृष्टि का साहित्यकार बनाता है। साहित्यकार का यह 'स्व' अभिव्यक्ति से पूर्व अनेक प्रकार के दबावों से घिरा रहता है। ये दबाव निजी और सामाजिक-दोनों प्रकार के हो सकते हैं। निजी दबावों में साहित्यकार के अपने संस्कार, मर्यादाएँ, विचार आदि उसकी अभिव्यक्ति को नियंत्रित कर सकते हैं और सामाजिक दबाव भी उसे एक सीमा से आगे जाने से रोक सकते हैं, लेकिन साहित्यकार यदि अपने 'स्व' की अभिव्यक्ति ईमानदारी के साथ करना चाहता है तो उसे कई बार 'अकेला' ही चलना पड़ता है ।**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 10

कारण होता है। साहित्यकार जब अपने समय से टक्कर लेता है, उसे चुनौती देता है और उसकी अमानवीय परिस्थितियों को बदलना चाहता है तब उसकी अभिव्यक्ति पर संकट उत्पन्न होता है। इस दृष्टि से चाहे कबीर हों, तुलसीदास या मीरा, प्रेमचंद हों, सलमान रुश्दी या तसलीमा नसरीन, सभी को अपनी अभिव्यक्ति के लिए समाज और सत्ता का गहरा दबाव अनुभव करना पड़ा।

वास्तव में, ऐसे संकट ही साहित्यकार के 'स्व' की परीक्षा कराते हैं कि वह कितना अपनी चेतना, अपने दृष्टिकोण, अपने विचारों और दर्शन के प्रति संकल्पशील और दृढ़ है। कबीर ने हिंदू-मुसलमान दोनों

**जब साहित्यकार के 'स्व' में उसके निजी सुख-दुःख अपने समय, समाज और राष्ट्र के सुख-दुःख में रूपायित हो जाते हैं, जब वह अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं और आकांक्षाओं को समाज और राष्ट्र की आकांक्षाओं और इच्छाओं के अनुरूप ढाल लेता है, तब उसके 'स्व' में राष्ट्र का 'स्व' जुड़ जाता है और वह राष्ट्रीय-स्व का प्रतिरूप बन जाता है।**

की आलोचना की तो वे अपने समय के शासकों से डरे नहीं। तुलसीदास ने भगवान् राम को राक्षसों का वध करते दिखाकर किसी 'सीकरी'की चिंता नहीं की। मीरा हँस-हँस कर विष का प्याला पी गई, लेकिन भगवान् कृष्ण के प्रेम में पागल बनी रही। प्रेमचंद देश-प्रेम के कहानी-संग्रह 'सोज़ेवतन' के कारण अंग्रेज कलक्टर द्वारा दंडित तथा अपमानित हुए, लेकिन उन्होंने अपने 'स्व' का मार्ग नहीं छोड़ा ।

बांग्ला देश की लेखिका तसलीमा के उपन्यास 'द्विखंडिता' पर पश्चिमी बंगाल की कम्यूनिस्ट सरकार ने प्रतिबंध लगा दिया, परंतु वह निडरता से कोलकाता पहुँच गई और अपने 'स्व' की घोषणा की। जब साहित्यकार के 'स्व' में उसके निजी सुख-दुःख अपने समय, समाज और राष्ट्र के सुख-दुःख में रूपायित हो जाते हैं, जब वह अपनी व्यक्तिगत इच्छाओं और आकांक्षाओं को समाज और राष्ट्र की आकांक्षाओं और इच्छाओं के अनुरूप ढाल लेता है, अर्थात् जब वह 'अपना' नहीं सबका हो जाता है, तब उसके 'स्व' में संपूर्ण समाज और राष्ट्र का 'स्व' जुड़ जाता है और वह अपने जातीय और राष्ट्रीय-स्व का प्रतिरूप बन जाता है। वास्तव में, ऐसा ही साहित्यकार जो अपने निजी 'स्व' को जातीय और राष्ट्रीय 'स्व' में रूपांतरित कर देता है, राष्ट्रीय साहित्यकार बन जाता है। वह कालजयी होता और वह राष्ट्रीय अस्मिता का प्रतीक बन जाता है।

भारत का आधुनिक काल सभी दृष्टियों से इसी 'स्व' की पहचान, खोज और रूप देने का काल है । भारत राष्ट्र सैकड़ों वर्षों तक गुलाम रहा। इस्लाम के विदेशी अनुयायियों एवं आक्रमणकारियों ने भारत की धन-संपदा को लूटा, धर्म-स्थलों को विध्वंस किया एवं धर्मांतरण किया और जनता को गुलाम बनाकर रखा। भारत के 'स्व' पर यह सर्वाधिक प्रबल आक्रमण था, लेकिन यहाँ के धर्म, संस्कृति, दर्शन और शौर्य ने भारत के 'स्व' की रक्षा की और लाखों लोग अपने 'स्व' के लिए बलिदान हो गए। अंग्रेजों का आगमन यद्यपि व्यापार के लिए हुआ था, किंतु उन्होंने भी ईसाई धर्म के प्रचार, हिंदुओं के धर्मांतरण, पश्चिमी ज्ञान-विज्ञान की श्रेष्ठता आदि के द्वारा भारत के इस 'स्व' को तोड़ने का प्रयास किया और भारत को 'साधुओं और सर्पों का देश' कहकर सारे विश्व में प्रचारित किया। मिस मेयो की 'मदर इंडिया' पुस्तक इसका सबसे बड़ा प्रमाण है। महात्मा गांधी ने मिस मेयो की पुस्तक की आलोचना की और उन ईसाई मिशनरियों को भी समुचित उत्तर दिया जिन्होंने गांधी को ईसाई बनाने का प्रयत्न किया।

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 11



महात्मा गांधी ने स्पष्ट कहा कि मैं हिंदू होने के कारण अन्य धर्मों का सम्मान कर पाता हूँ। गांधी का यह हिंदूपन भी भारत के 'स्व' का प्रमाण था, जो ईसाई एवं इस्लाम धर्म आदि की तुलना में हिंदू धर्म की श्रेष्ठता को स्थापित करता था। भारत में मुस्लिम शासकों का पराभव हो चुका था और गोरी जाति नए शासक बनकर देश को गुलाम बना चुकी थी, तब भारत में जीवन के सभी क्षेत्रों में अपने 'स्व' की पहचान की प्रबल आँधी-सी प्रकट हुई। अंग्रेज अपने दमनकारी शासन के साथ विज्ञान एवं आविष्कारों की नई दुनिया लेकर आए थे और उन्होंने भारत की शिक्षा व्यवस्था में प्रवेश कर अंग्रेजी भाषा के माध्यम के विश्वविद्यालय खोलकर हिंदुस्तानियों को 'काले अंग्रेज' बनाना शुरू कर दिया

**भारत का आधुनिक काल सभी दृष्टियों से इसी 'स्व' की पहचान, खोज और रूप देने का काल है। महात्मा गांधी ने स्पष्ट कहा कि मैं हिंदू होने के कारण अन्य धर्मों का सम्मान कर पाता हूँ। गांधी का यह हिंदूपन भी भारत के 'स्व' का प्रमाण था जो ईसाई एवं इस्लाम धर्म आदि की तुलना में हिंदू धर्म की श्रेष्ठता को स्थापित करता था।**

था और कला, संस्कृति, दर्शन, शासन, प्रबंध, चिकित्सा, सैन्य शक्ति आदि सभी क्षेत्रों में अपनी श्रेष्ठता स्थापित करते हुए हिंदुस्तानियों के मन में 'हीनता' ग्रंथि उत्पन्न कर रहे थे। अंग्रेजों के इस श्रेष्ठता के अहंकार तथा हिंदुस्तानियों को निम्न तथा हीन मानने की पूरे देश में गहरी प्रतिक्रिया होने लगी। इस मानसिक उद्वेलना में संस्कृत-भाषा से शिक्षित स्वामी दयानंद और अंग्रेजी भाषा से शिक्षित राजा राममोहन राय, बंकिम, शरत्, टैगोर, अरविंद घोष, विवेकानंद, महात्मा गांधी, प्रेमचंद आदि असंख्य हिंदुस्तानियों ने अपने कार्यों एवं विचारों से ऐसा जागरण उत्पन्न किया कि भारत के 'स्व' की, उसकी अस्मिता की, उसकी संस्कृति की, उसकी आधुनिक चेतना की पहचान का प्रबल आंदोलन शुरू हो गया। इसे कुछ विद्वानों ने 'नवजागरण' का नाम दिया परंतु यह वास्तव में राष्ट्रीय 'स्व' की पहचान के साथ उसे पुनः स्थापित करने का लोक-जागरण था। भारत के राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने लिखा था कि 'हम कौन थे, क्या हो गए और क्या होंगे अभी' इस पर विचार करना आवश्यक है, अर्थात् यह भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों कालों की दृष्टि से भारत के 'स्व' और उसकी अस्मिता को जानने और उसकी रक्षा करने का संकल्प था।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दौर में तथा बीसवीं शताब्दी के आरंभ से ही साहित्यकारों के साहित्य-कर्म पर भारत के इस राष्ट्रीय 'स्व' का गहरा प्रभाव पड़ा और वे भी स्व-भाषा, स्व-संस्कृति, स्वदेशी, स्वराज्य अर्थात् जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इस 'स्व' को रूपायित करने में तत्पर हो उठे। अरविंद ने 'भारत माता' की कल्पना की और 'आनंद मठ' के 'वंदेमातरम्' ने तो पूरे देश में हलचल उत्पन्न कर दी।

दक्षिण भारत में सुब्रमन्य भारती ने इस राष्ट्रीय 'स्व' का उद्घोष किया। इस प्रकार सारे देश में, अंग्रेजों के बर्बर दमन के बावजूद भारतीय 'स्व' और 'अस्मिता' की रक्षा के साथ स्वाधीनता प्राप्ति के लिए युद्ध शुरू हुआ।

महात्मा गांधी ने अहिंसा एवं सत्याग्रह से इस युद्ध को लड़ा और भगतसिंह, चंद्रशेखर आजाद, सुखदेव, सुभाष चंद्र बोस आदि ने इसे शक्ति और शस्त्र से जीतने का प्रयत्न किया। इस कारण देश में नरम और गरम दल बन गए, लेकिन देश में ऐसे गद्दार भी पैदा हुए जिन्होंने अंग्रेजों की चाकरी की, उनके लिए जासूसी की और अनेक देशभक्तों को फाँसी के फंदे पर चढ़वा दिया, लेकिन इससे देश-प्रेमी साहित्यकार, राज-नेता

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 12

**उन्नीसवीं शताब्दी के अंतिम दौर से ही साहित्यकारों के साहित्य-कर्म पर भारत के राष्ट्रीय 'स्व' का गहरा प्रभाव पड़ा और वे स्व-भाषा, स्व-संस्कृति, स्वदेशी, स्वराज्य अर्थात् जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इस 'स्व' को रूपायित करने में तत्पर हो उठे। अरविंद ने 'भारत माता' की कल्पना की और 'आनंद मठ' के 'वंदेमातरम्' ने तो पूरे देश में हलचल उत्पन्न कर दी। प्रेमचंद, मैथिलीशरण गुप्त, जय शंकर प्रसाद, श्याम नारायण पांडेय, दिनकर, नवीन, निराला, सुभद्रा कुमारी चौहान आदि साहित्यकारों ने 'राष्ट्रीय स्व' और भारतीयता को वाणी दी। प्रेमचंद ने तो स्पष्ट लिखा कि हमने चाहे उपन्यास और गल्प का कलेवर यूरोप से लिया है, किंतु हमने इसका प्रयत्न किया है कि उसमें 'भारतीय आत्मा' सुरक्षित रहे।**

एवं समाज-सुधारक भयभीत नहीं हुए और अपने-अपने साधनों से स्वाधीनता और स्व-संस्कृति के लिए संघर्षशील बने रहे। इन परिस्थितियों में प्रेमचंद, मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, श्याम नारायण पांडेय, दिनकर, नवीन, निराला, सुभद्रा कुमारी चौहान आदि ऐसे साहित्यकार उत्पन्न हुए जिन्होंने 'राष्ट्रीय स्व' और भारतीयता को वाणी दी। प्रेमचंद ने तो स्पष्ट लिखा कि हमने चाहे उपन्यास और गल्प का कलेवर यूरोप से लिया है, किंतु हमने इसका प्रयत्न किया है कि उसमें 'भारतीय आत्मा' सुरक्षित रहे। ('प्रेम द्वादशी', भूमिका से) प्रेमचंद साहित्य में इस भारतीय आत्मा की रक्षा का संकल्प लेते हैं और अपनी कहानियों,

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 13



उपन्यासों तथा लेखों में पश्चिमी ज्ञान-विज्ञान, धर्म और संस्कृति के दोषों और उनकी अमानवीयता का तथा भारत के परंपरागत संस्कारों, धर्म, नीति, सत्य, आदर्श आदि की श्रेष्ठता का चित्रण करते हैं। प्रेमचंद का संपूर्ण साहित्य इसी भारतीयता का प्रतिपादन करता है चाहे वे कुछ स्थानों पर फ्रांसीसी और रूसी क्रांति से प्रेरणा लेते हैं। प्रेमचंद ने लेनिन की बोल्शेविक क्रांति से यह शक्ति ली कि दुर्बल तथा शोषित को भी शोषण के विरुद्ध खड़ा किया जा सकता है, लेकिन उन्होंने अपनी भारतीयता के कारण खूनी क्रांति के उनके सिद्धांत को स्वीकार नहीं किया। वे महात्मा गांधी के हृदय-परिवर्तन, ट्रस्टीशिप, अहिंसा तथा मानवीय गुणों के अंत तक

**भारत की स्वतंत्रता से पूर्व हिंदी साहित्य का प्रमुख स्वर स्वराज्य, स्व-संस्कृति, स्व-भाषा, स्वदेशी और अपनी अस्मिता की खोज और उसकी अभिव्यक्ति का है। यह खोज और अभिव्यक्ति इतनी प्रबल और घनीभूत है कि स्वतंत्रता के बाद 50-55 वर्षों के बीच लिखा गया साहित्य उसके गौरव और गरिमा, शक्ति और अभिव्यक्ति तथा कला की कसौटियों पर कहीं भी नहीं टिक पाता।**

समर्थक रहे, क्योंकि उसमें उन्हें अपनी भारतीय परंपरा और अस्मिता का रूप दिखाई देता था। वैसे भी, बोल्शेविक क्रांति से पहले स्वामी दयानंद और विवेकानंद हिंदू समाज में फैले शोषण, दमन, भेद-भाव का विरोध करते हुए समरसता की स्थापना कर चुके थे और प्रेमचंद अपने आरंभिक रचना-काल में ही स्वामी दयानंद और स्वामी विवेकानंद के इस जीवन-दर्शन से प्रभावित होकर अपनी रचनाओं में उसकी अभिव्यक्ति कर रहे थे। हमारे मार्क्सवादी आलोचक और मार्क्सवादी राजनेता प्रेमचंद को मार्क्सवादी कथाकार कहकर अपनी अज्ञानता और अंधी राजनीति का ही प्रमाण नहीं देते, बल्कि प्रेमचंद को लाल कटघरे में बंद करके उनके साहित्य-संसार को भी सीमित कर देते हैं तथा उन्हें अपने राजनीतिक स्वार्थों का हिस्सा बना लेते हैं। प्रेमचंद भारत राष्ट्र के 'स्व' के, उसकी अस्मिता के साहित्यकार थे। वे आधुनिक भारतीयता के संस्थापक साहित्यकार थे और इन अर्थों में वे कबीर, तुलसीदास, भारतेंदु हरिश्चंद्र, मैथिलीशरण गुप्त आदि की परंपरा में आते हैं।

प्रेमचंद के समकालीन साहित्यकारों में–जयशंकर प्रसाद, पंत, निराला आदि छायावादी साहित्यकार तथा रामचंद्र शुक्ल जैसे कालजयी आलोचक भी इसी भारतीय 'स्व' की खोज करते हैं और भारत के परंपरागत मूल्यों, धर्म और संस्कृति को आत्सात् करके चलते हैं। भारत की स्वतंत्रता से पूर्व हिंदी साहित्य का प्रमुख स्वर स्वराज्य, स्व-संस्कृति, स्व-भाषा, स्वदेशी और अपनी अस्मिता की खोज और उसकी अभिव्यक्ति का है। यह खोज और अभिव्यक्ति इतनी प्रबल और घनीभूत है कि स्वतंत्रता के बाद 50-55 वर्षों के बीच लिखा गया साहित्य उसके गौरव और गरिमा, शक्ति और अभिव्यक्ति तथा कला की कसौटियों पर कहीं भी नहीं टिक पाता। पश्चिम के प्रभाव में हिंदी कविता और कहानी में अनेक आंदोलन हुए और असंख्य युवा रचनाकार जुड़े भी, परंतु उनमें एक भी प्रेमचंद, जयशंकर प्रसाद, निराला, महादेवी अथवा रामचंद्र शुक्ल जैसा साहित्यकार नहीं हुआ। इसके विपरीत स्थिति यह है कि स्वतंत्रता के बाद पैदा होने वाले हिंदी साहित्यकारों में एक भी ऐसा नहीं है जो साहित्य के इतिहास में अमरत्व का वरदान लेकर आया हो। स्वतंत्रता ने हमें स्वराज्य तो दिया, परंतु इस स्वराज्य में हमारा 'स्व' ही बिखर गया, उसकी उपेक्षा और भर्त्सना हुई। प्रेमचंद इस स्थिति को देख रहे थे और इसीलिए उन्होंने, 'आहुति' कहानी में कहा कि स्वराज्य का यह अर्थ नहीं है कि जॉन की जगह गोविंद बैठ जाए। प्रेमचंद की यह

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 14

आशंका सत्य सिद्ध हुई और स्वराज्य के बाद जॉन की जगह गोविंद ही बैठा। व्यक्ति तो बदला, परंतु शासकों का रूप-रंग, सोच-व्यवहार कुछ भी नहीं बदला। पं. जवाहरलाल नेहरू देश के प्रथम प्रधानमंत्री बने तो भारत पश्चिम के निकट होता गया और उसका 'स्व' धूमिल होने लगा। उनके कार्यकाल में हुए चीनी आक्रमण ने तो हमारी अस्मिता और शक्ति पर गहरी चोट की और जब उनकी पुत्री इंदिरा गांधी का जमाना आया तो स्वराज्य तानाशाही एवं अपराधी मनोवृत्ति में बदल गया। महात्मा गांधी के चिंतन को भुला दिया गया और सारा ध्यान महात्मा गांधी की हत्या का राजनीतिक लाभ प्राप्त करने में लगा दिया। इंदिरा गांधी पाकिस्तान को पराजित करने तथा बांग्ला देश के निर्माण में अवश्य ही भारतीय शक्ति और अस्मिता की प्रतीक बनी, परंतु वे भी चाणक्य नहीं बन सकी और पाकिस्तान के एक लाख युद्ध बंदी सैनिकों को पाक अधिकृत कश्मीर को वापिस लिए बिना ही छोड़ दिया। इसके बाद तो भारतीय राजनीति में अवसरवाद, दल बदल, मंडल-कमीशन, धर्मनिरपेक्षता, अपराधीकरण, सरकारी धन की लूट-पाट के साथ राष्ट्रीय-सांस्कृतिक जीवन-दृष्टि को अपमानित करने की प्रवृत्ति प्रबल होने लगी। इस प्रकार भारत का राष्ट्रीय 'स्व' आहत हो गया। इसके साथ पश्चिम की जीवनशैली, व्यापार तथा मीडिया ने भी भारत के स्वदेशी, स्व-संस्कृति व स्व-भाषा चिंतन पर गहरा आक्रमण शुरू किया और आज हम अपने 'स्व' को, अपनी भारतीयता को डूबता हुआ देख रहे हैं।

इन परिस्थितियों में बस एक ही किरण है– भारत की राष्ट्रीय सांस्कृतिक चिंतन-धारा, भारतीयता की अटूट एवं शक्तिशाली धारा, भारत को भारत बनाए रखने का संकल्प और इस संकल्प के साथ जीने वाली भारत की लोक-शक्ति। राजनीति, समाज, धर्म और संस्कृति के क्षेत्र में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक विचारधारा पर चारों ओर से आक्रमण होने पर भी उसका विस्तार हो रहा है। देश में छद्म निरपेक्षता तथा राष्ट्रीय-सांस्कृतिक विचार को अछूत बनाए रखने का भंडाफोड़ हो चुका है और जनता स्वार्थी, देशद्रोही राजनेताओं के मंतव्यों को समझ रही है। अतः इसमें कोई शंका नहीं है कि भारत-भूमि पर भारतीयता की रक्षा और उसके लिए लड़ने वालों की ही विजय होगी। देश में कौरव और कंस कुछ समय तक शासन तो कर सकते हैं, लेकिन इस भारत के राष्ट्रीय 'स्व' को मटियामेट नहीं कर सकते। इतिहास का सत्य यही है कि कौरवों और कंस को मरना ही है– अपने-अपने अहंकार, अपने-अपने असत्य, अधर्म, अन्याय और अप-संस्कृति के साथ । जो शासक अपने देश की आत्मा का, अपनी मिट्टी का नहीं होता, उसे मिट्टी ही मिट्टी में मिला देती है।

आज के साहित्यकार को अपने साहित्य-कर्म में इसी सत्य को पहचानने की आवश्यकता है। पश्चिम

**इन परिस्थितियों में बस एक ही किरण है–भारत की राष्ट्रीय सांस्कृतिक चिंतन-धारा, भारतीयता की अटूट एवं शक्तिशाली धारा, भारत को भारत बनाए रखने का संकल्प और इस संकल्प के साथ जीने वाली भारत की लोक-शक्ति। राजनीति, समाज, धर्म और संस्कृति के क्षेत्र में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक विचारधारा पर चारों ओर से आक्रमण होने पर भी उसका विस्तार हो रहा है और जनता स्वार्थी, देशद्रोही राजनेताओं के मंतव्यों को समझ रही है।**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 15



**आज के साहित्यकार का साहित्य-कर्म एवं उत्तरदायित्व पहले से बढ़ गया है। उसे इसका ध्यान रखना होगा कि उसका साहित्य- कर्म उसकी जातीय एवं राष्ट्रीय आकांक्षा को उद्घटित करने के साथ भारतीयता की मूल भूमि से गहराई से जुड़ा रहे। भारत का लोक-जीवन इस संकट को देख रहा है, परंतु वह उपभोक्ता संस्कृति के आकर्षण के बीच भी अपनी मूल संस्कृति को छोड़ना नहीं चाहता। ऐसी स्थिति में भारत को भारत भी रहना है और विकास एवं आधुनिकता के मानवीय पक्ष को भी लेकर चलना है।**

की नकल, स्त्री के शरीर का भौगोलिक वर्णन, कुंठा और संत्रास, यथार्थ के नाम पर अनैतिक और अश्लील चित्रण, साहित्यकारों की चापलूसी, चाटुकारिता और गिरोहबंदी हमारे साहित्य को पथभ्रष्ट कर रही है।

स्वतंत्रता की आधी शताब्दी के बाद भी हमारा साहित्यकार स्वराज्य और राष्ट्रीय-स्व के प्रति उदासीन है और इसी कारण उसकी रचना निष्प्राण होती जा रही है। आज साहित्यकार जमीन से जुड़ने का नाटक तो करता है, परंतु वह कबीर और प्रेमचंद के समान अपने सिर को अपनी हथेली पर रखने को तैयार नहीं है। आज अंग्रजों की गुलामी से भी बड़ा संकट है। आज अपने ही लोग जनता का खून चूस रहे हैं, उसे लूट रहे हैं और सारी सुविधाएँ एवं सत्ता अपनी मुट्ठी में बंद किए हुए हैं। आज गोविंद भी जॉन बन गया है और बाहरी शक्तियाँ भी आर्थिक जाल फैला रही हैं। कुछ वर्ष पहले जब पी. चिदंबरम वित्त मंत्री थे तो वे ब्रिटेन में व्यापारियों को भारत में आने तथा दो सौ वर्षों तक आर्थिक लाभ कमाने का निमंत्रण दे आए, तो देशवासियों को समझना चाहिए कि यह निमंत्रण कितनी निर्लज्जता से देश के स्वाभिमान, अस्मिता तथा राष्ट्रीय गौरव को नष्ट-भ्रष्ट करता है और किस प्रकार हमारे ही लोग देश को आर्थिक गुलामी में धकेल रहे हैं। उस समय राष्ट्रीय धारा के साहित्यकारों ने ही इस वक्तव्य का विरोध किया, लेकिन शेष साहित्यकार मौन साधे रहे।

आज के साहित्यकार का साहित्य-कर्म एवं उत्तरदायित्व पहले से बढ़ गया है। उसे इसका ध्यान रखना होगा कि उसका साहित्य- कर्म उसकी जातीय एवं राष्ट्रीय आकांक्षा को उद्घाटित करने के साथ भारतीयता की मूल भूमि से गहराई से जुड़ा रहे। भारत का लोक-जीवन इस संकट को देख रहा है, परंतु वह उपभोक्ता संस्कृति के आकर्षण के बीच भी अपनी मूल संस्कृति को छोड़ना नहीं चाहता। ऐसी स्थिति में भारत को भारत भी रहना है और विकास एवं आधुनिकता के मानवीय पक्ष को भी लेकर चलना है। आज के इस युग-धर्म के प्रति साहित्यकार को सचेत और सक्रिय होना ही आज का युगधर्म है– भारत के स्वराज्य की रक्षा, भारत की संस्कृति और अस्मिता की रक्षा तथा भारत का समग्र विकास। इक्कीसवीं शताब्दी में भारत के लिए यही एक मार्ग है। इस मार्ग पर चलकर भारत एक विकसित देश बन सकेगा और विश्व में अपनी विशिष्ट पहचान बना सकेगा। आज साहित्यकार का यही साहित्य-कर्म है कि वह देश की जनता में इन्हीं राष्ट्रीय संकल्पों की चेतना उत्पन्न करे और धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्र आदि के मतभेदों एवं विवादों को भूल कर देश के समग्र विकास के लिए कटिबद्ध होने को तैयार करे। आज साहित्यकार का देश के लिए यही कर्म और धर्म हो सकता है।

**लेखक प्रख्यात समीक्षक व**
**केंद्रीय हिंदी निदेशालय के उपाध्यक्ष हैं।**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 16

महाकवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' कृत 'राम की शक्तिपूजा' हिंदी साहित्य की महानतम रचनाओं में से एक है। उन्होंने 'मानव मन की अपराजेयता' का जो संदेश अपनी रचना में दिया है वह किसी भी व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के लिए अनमोल है। कहा जाता है 'मन के हारे हार है, मन के जीते जीत'; मन की इसी जीत से संघर्षपूर्ण जीवन में विजय श्री प्राप्त करना मानव जीवन की सार्थकता है। निराला ने जिन हताशा व निराशाजनक परिस्थितियों में इस महाकाव्य की रचना की वह उनके व्यक्तिगत जीवन के साथ-साथ स्वातंत्र्य आंदोलन के दौरान राष्ट्र जीवन में भी प्रत्यक्ष दिखायी देती है। परंतु इस सब के बावजूद निराला ने जिस प्रकार राष्ट्रीय चेतना के संवाहक राम के माध्यम से संदेश दिया– 'वह एक और मन रहा राम का जो न थका, जो नही जानता दैन्य, नहीं जानता विनय, कर गया भेद वह मायावरण प्राप्त कर जय' वह अद्वितीय है। मानव मन की यही अपराजेयता किसी व्यक्ति, समाज व राष्ट्र को अपराजेय बनाती है।

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 17



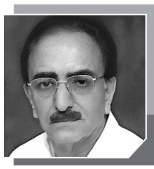

ओमीश परुथी

## निराला कृत

# राम की शक्तिपूजा

## की युगानुरूपता

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' आधुनिक हिंदी काव्य के समर्थ व सिद्ध कवि थे। वे भारतीय दर्शन व संस्कृति के उद्‌गाता थे। सनातन जीवन मूल्यों में उनकी गहन आस्था थी। अपने काव्य के माध्यम से उन्होंने इन मूल्यों का प्रशस्य पोषण किया है। लेकिन गलित मानकों व मूल्यों का समर्थन उन्होंने कभी नहीं किया, क्योंकि परंपरागत श्रेष्ठ तत्त्वों को आत्मसात करते हुए भी उनकी दृष्टि प्रगतिशील थी। इसीलिए वे एक साथ 'तुम और मैं', 'तुलसीदास', 'राम की शक्तिपूजा' तथा 'तोड़ती पत्थर', 'भिक्षुक' व 'कुकुरमुत्ता' जैसी कविताएँ रचने की क्षमता रखते थे। उनके काव्य में विलक्षण सामंजस्य संलक्ष्य है। उन्होंने अपनी पहली कविता आज से ठीक सौ वर्ष पहले रची थी। इन सौ वर्ष में हिंदी काव्य में अनेक उतार-चढ़ाव आए। एक ओर 'अकविता' और दूसरी ओर 'सनातन सूर्योदयी कविता' के ध्वज फहराए जाते रहे, लेकिन निराला-काव्य का महत्त्व सदैव बना रहा। उसकी गरिमा आज भी अक्षुण्ण है। अपितु पूर्वापेक्षा वह आज अधिक प्रासंगिक, युगानुरूप व सार्थक है क्योंकि वह भारतीय दर्शन की सुष्ठु पीठिका पर अवस्थित तो है ही, आज के मानवतावाद के मानकों पर खरा उतरता है।

निराला कृत 'राम की शक्तिपूजा' आधुनिक हिंदी काव्य की महनीय उपलब्धि है। रूपाकार में महाकाव्य के अनुरूप न होते हुए भी यह कविता महाकाव्यात्मक औदात्त्य व औदार्य से मंडित है। इसमें महाप्राण निराला की काव्य- प्रतिभा का चरम निदर्शन हुआ है। डॉ. नगेंद्र ने इसे निराला की सर्वोत्कृष्ट रचना मानते हुए लिखा है– 'राम की शक्तिपूजा' आधुनिक हिंदी कविता का गौरव शिखर है, जिसमें महाप्राण कवि की प्रतिभा का पूर्ण उत्कर्ष व कलात्मक वैदग्ध्य का अपूर्व समन्वय मिलता है।' वस्तुतः इसके आंतरिक और बाह्य दोनों पक्ष नित नूतन-सौंदर्य की अवधारणा के अनुरूप हैं।

निराला-काव्य के मर्मज्ञ आलोचक डॉ. राम विलास शर्मा ने इसे 'एपिक क्वालिटी' से ओत-प्रोत रचना कहा है। उनका मत है कि इस कविता में छायावादी

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 18

काव्यकला का चरम-उत्कर्ष परिलक्षित होता है। सूक्ष्मता, सांकेतिकता के साथ भावनाओं के उत्थान-पतन व अंतर्द्वंद्व का जैसा सुंदर काव्य-विधान यहाँ मिलता है, वैसा अन्यत्र कठिन है। यह अंतर्द्वंद्व निराला काव्य को युगानुरूप बनाता है।

'राम की शक्तिपूजा' 312 पंक्तियों की एक 'लंबी कविता' है, जो पाँच खंडों में विभक्त है। हिंदी में महाकाव्य, खंड काव्य के अतिरिक्त लंबी कविता की एक अलग विधा है। इसमें संक्षिप्त कथा-सूत्र के द्वारा कवि अपने कथ्य को प्रतिपादित करता है। इसमें कथानक खंडों में विभक्त होता है, लेकिन इसे खंड-काव्य नहीं कहा जा सकता। यह उससे अलग एक स्वतंत्र विधा है। हिंदी में प्रतिष्ठित लंबी कविताएँ

**हिंदी में प्रतिष्ठित लंबी कविताएँ ज्यादा नहीं हैं। उनमें से भी तीन निराला के द्वारा प्रणीत हैं। 'राम की शक्ति-पूजा' में रामायण के अंतर्गत वर्णित राम-रावण युद्ध के एक प्रसंग को आधार बनाकर कथा कही गई है।**

अधिक नहीं है। उनमें से भी तीन निराला के द्वारा प्रणीत हैं। 'राम की शक्तिपूजा' में रामायण के अंतर्गत वर्णित राम-रावण युद्ध के एक प्रसंग को आधार बनाकर कथा कही गई है। 'देवी भागवत', 'कालिका पुराण', शिव महिम्न स्तोत्र तथा पं. कृतिवास की बंगला रामायण इसके उपजीव्य ग्रंथ हैं। प्रमुखतया इसका आधार 15वीं शताब्दी में रचित पं. कृतिवास की बंगला रामायण है। इस पौराणिक कथा को सर्वथा अर्वाचीन व युगानुरूप पुनर्रचित करने में निराला सफल रहे हैं। इस संदर्भ में स्वयं निराला ने लिखा है– 'इसका विषय तो पुराना है, पर इसकी अदायगी और अनुबंध अद्यतन है और प्रभाव नित्य नूतन है।'

निराला ने वास्तव में पूर्व-वृत्त की कलात्मक पुनर्रचना की है जो आधुनिक युगानुरूप है। संस्कृत काव्यशास्त्र के प्रख्यात आचार्य कुंतक ने कलात्मक पुनर्रचना के लिए दो विधियाँ बताई हैं- 'विद्यमान का संशोधन' एवं 'अविद्यमान की कल्पना'। निराला ने इनका प्रयोग बड़ी सिद्धहस्तता से किया है। परिणामतः पुरानी कथा नया कलेवर पाकर बड़ी आकर्षक व आधुनिक बन पड़ी है।

'राम की शक्तिपूजा' के कथानक का प्रारंभ युद्ध-भूमि से होता है, जिस पर दिन भर राम और रावण का प्रचंड युद्ध होता रहा है। दोनों अपराजेय हैं। अब सूर्यास्त हो रहा है। युद्ध-विराम के बाद दोनों सैन्य दल अपने-अपने शिविरों को लौट रहे हैं। युद्ध में आज रावण पक्ष भारी रहा, अतः राक्षस दल सहर्ष, उछलते-कूदते जा रहे हैं, जबकि वानर भिक्षुओं के समान मौन चल रहे हैं। राम भी हतप्रभ दिखाई दे रहे हैं क्योंकि आज उनके अमोघ बाण भी लक्ष्य को भेद नहीं पाए। आज के प्रखर युद्ध का वर्णन करते हुए निराला लिखते हैं–

रवि हुआ अस्त, ज्योति के पत्र पर लिखा,
अमर रह गया राम-रावण का अपराजेय समर
आज का तीक्ष्ण शर-विधृत-क्षिप्रकर, वेग प्रखर
शतशेल संवरणशील, नील नभगर्जित - स्वर

निराला द्वारा युद्ध का वर्णन बड़े प्रभावशाली रूप में किया गया है। ओजस्वी भाषा व सामासिक पदावली ने युद्ध की प्रचंडता को पाठक के समक्ष साक्षात कर दिया है। इनके युद्ध-वर्णन पर वाल्मीकि रामायण के युद्ध-वर्णन का प्रभाव स्पष्ट लक्षित होता है। डॉ. रामविलास शर्मा ने इस संदर्भ में वाल्मीकि रामायण के एक श्लोक को उद्धृत किया है–

युद्धयातमेव तेषां तु तदावानरराक्षसाम् ।
रविरस्तंगतः रात्रिः प्रवृत्ताप्राणहारिणी ।।

अर्थात् वानर व असुरों के बीच ऐसा भीषण युद्ध

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 19



हो रहा था कि युद्ध करते-करते सूर्यास्त हो गया और भयावह रात्रि शुरू हो गई। 'राम की शक्तिपूजा' की प्रारंभिक पंक्तियों में इसी युद्ध का वर्णन है –

अनिमेष-राम विश्वजिद्दव्य-शर-भंग-भाव
विद्धांग-बद्ध-कोदंड-मुष्टि-खर-रुधिर स्राव,
रावण-प्रहार-दुर्वार-विकल वानर-दल-बल,
मुर्छित-सुग्रीवांगद-भीषण-गवाक्ष-गय-नल ।

रावण की रक्षा देवी माँ कर रही थी, इसीलिए राम के विश्वजयी बाण भंग हो रहे थे। राम निस्तेज होकर अपलक आँखों से यह दृश्य देख रहे थे। उनका शरीर रावण के बाणों से बिद्धकर धावों से भर गया था। खून बह रहा था। फिर भी उन्होंने धनुष को मुट्ठी में कसकर पकड़ा हुआ था। दूसरी ओर रावण के भीषण प्रहारों से वानर दल व्याकुल हो उठा था। सुग्रीव, अंगद, विभीषण आदि योद्धा मूर्छित हो गए थे।

उपर्युक्त पद्यांश में निराला की भाषा युद्ध वर्णन के सर्वथा अनुकूल है। युद्ध की जीवंतता को दर्शाने के लिए उन्होंने क्रियापदों एवं विभक्ति चिह्नों से मुक्त तथा सघन, समस्त पदों से युक्त भाषा का उपयोग किया है। भाषा पर निराला का पूर्ण अधिकार था। भावानुरूप सशक्त भाषा का प्रयोग निराला की विशिष्टता भी है ।

शिविर में पहुँच कर राम ने आज के युद्ध के आकलन और कल के लिए नीति-निर्धारण करने हेतु एक मंत्रणा-सभा बुलाई, जिसमें उनके पक्ष के सभी प्रमुख योद्धा उपस्थित हुए। राम ने सभासदों को आज के युद्ध के विषय में बताते हुए कहा कि दुख इस बात का है कि महाशक्ति आज दुष्ट रावण को बचा रही थी। सीता का अपहरण करने वाले पापी को बचाते हुए उन्होंने मेरे अमोघ बाणों को भी निष्फल कर दिया। वे इस घटना को याद कर इतने कातर हुए कि उनकी आँखों से दो बूँद आँसू गिर पड़े। यहाँ राम का अंकन परंपरागत न होकर युगानुरूप एक सामान्य मानव-सा है, जो आपदा आने पर अवसाद ग्रस्त होकर आकुल हो जाता है। अपने स्वामी की यह दशा देखकर हनुमान अत्यधिक क्रुद्ध हो गए। लेकिन जाम्बवान ने सारी स्थिति को संभालते हुए राम से कहा 'आप भी देवी को प्रसन्न करने के लिए उनकी अर्चना करो। आराधना का उत्तर आराधना से दो।' युद्ध की चिंता न करो। उसे हम संभाल लेंगे। लक्ष्मण के नेतृत्व में युद्ध करने के लिए सभी योद्धा तैयार थे। समूची सभा ने जाम्बवान के प्रस्ताव का समर्थन किया। राम ने हनुमान को पूजा हेतु 108 नील कमल लाने के लिए देवी कुंड भेजा।

पूजा के लिए बैठने से पूर्व राम ने वीर-वेश त्याग कर साधकोचित वस्त्र धारण किए। पृष्ठभूमि में युद्ध का कोलाहल हो रहा था, लेकिन राम उसकी उपेक्षा कर देवी के ध्यान में लीन हो गए। देवी के नाम का जाप करते हुए उन्हें एक के बाद एक-पाँच दिन हो गए। प्रत्येक जाप के साथ वे माँ दुर्गा के चरणों में एक कमल अर्पित करते रहे। एक ही आसन में बैठकर निरंतर ध्यानावस्थित रहते हुए उनका मन आंतरिक चक्रों को क्रमशः आरोहण करते हुए विशुद्ध चक्र को पार कर गया। छठे दिन उनका ध्यान आज्ञा चक्र पर केंद्रित हो

**राम ने समासदों को आज के युद्ध के विषय में बताते हुए कहा कि दुख इस बात का है कि महाशक्ति आज दुष्ट रावण को बचा रही थी। सीता का अपहरण करने वाले पापी को बचाते हुए उन्होंने मेरे अमोघ बाणों को भी निष्फल कर दिया। वे इस घटना को याद कर इतने कातर हुए कि उनकी आँखों से दो बूँद आँसू गिर पड़े। अपने स्वामी की यह दशा देखकर हनुमान अत्यधिक क्रुद्ध हो गए। लेकिन जाम्बवान ने सारी स्थिति को संभालते हुए राम से कहा 'आप भी देवी को प्रसन्न करने के लिए उनकी अर्चना करो। आराधना का उत्तर आराधना से दो।'**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 20

गया। आठवें दिन उनका मन विष्णु, ब्रह्मा, व शंकर के स्तर को पार कर गया। वे पूजा-अनुष्ठान में 107 कमल भेंट कर चुके थे। मात्र एक कमल शेष रह गया था। दुर्गा ने परीक्षा लेने के लिए उस कमल को चुरा लिया। ध्यानावस्थित राम ने अंतिम कमल भेंट करने के लिए ज्यों ही हाथ आगे बढ़ाया, तो वह स्थान खाली था। उन्होंने अचानक नेत्र खोलकर देखा। कमल वहाँ नहीं था। वे बड़े व्याकुल हो गए क्योंकि न तो उस समय वे आसन छोड़ सकते थे, न ही कमल लाने के लिए कोई पास में था।

शुभ लग्न भी बीता जा रहा था। उनकी साधना भंग हो रही थी। इस स्थिति में वे गहन अवसाद से घिर

**राम पूजा-अनुष्ठान में 107 कमल भेंट कर चुके थे। मात्र एक कमल शेष रह गया था। दुर्गा ने परीक्षा लेने के लिए उस कमल को चुरा लिया। ध्यानावस्थित राम ने अंतिम कमल भेंट करने के लिए ज्यों ही हाथ आगे बढ़ाया, तो वह स्थान खाली था। उन्होंने अचानक नेत्र खोलकर देखा। कमल वहाँ नहीं था।**

गए। उनकी आँखें सजल हो गईं। वे दुखी थे कि इतना प्रयास करके भी वे अब रावण को परास्त नहीं कर पाएंगे। सीता का उद्धार भी नहीं हो पाएगा। अवशता की इस स्थिति में उन्हें अपना जीवन व्यर्थ प्रतीत हुआ – 'धिक् जीवन को जो पाता ही आया विरोध'। विद्वानों ने इस पंक्ति में ध्वनित हो रहे अवसाद को कविता के सर्जक निराला के जीवन से भी जोड़ा है। निराला ने भी जीवन भर दुख सहे–उनकी पत्नी की अकाल मृत्यु हो गई। तदुपरांत अठारह वर्षीय युवा पुत्री सरोज का रोगग्रस्त होकर निधन हो गया। इसके अतिरिक्त निराला को प्रतिभा संपन्न कवि होते हुए भी प्रकाशकों व विद्वानों की अवहेलना व अपमान सहना पड़ा। उन्होंने जब हिंदी काव्य में मुक्त छंद का प्रयोग किया, तब भी उन्हें उपहास का पात्र बनाया गया। कथानायक राम के जीवन के अवरोधों का अंकन करते हुए स्वयं उनका अपना दुख भी इन पंक्तियों में छलक आया है। निराला ने यहाँ अर्थ की कई सतहों को स्पर्श किया है जिससे उसमें युगीन चेतना भी व्यंजित हो उठी है। यद्यपि राम अपने जीवन को कोसते हुए काफी हताश दिखाई दे रहे थे, लेकिन उनका अंतर्मन ऐसा था जिसने अब भी पराजय स्वीकार न की थी। वह अब भी संघर्ष के लिए तैयार था –

वह एक और मन रहा राम का जो न थका।
जो नहीं जानता दैन्य, नहीं जानता विनय,
कर गया भेद वह मायावरण प्राप्त कर जय।

तत्कालीन परतंत्र भारत की परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में राम का संघर्ष और अपराजेयता बड़ी प्रासंगिक बन पड़ी है।

मन के स्थिर होते ही उन्हें याद आता है कि माँ कौशल्या उनके नेत्रों की तुलना कमल से करते हुए उन्हें 'राजीव नयन' कहती थी। यदि ये कमल के समान हैं तो मैं इन्हें ही माँ दुर्गा के चरणों में चढ़ा दूँगा। नेत्र निकालने के लिए जैसे ही उन्होंने तुणीर से बाण निकाला माँ दुर्गा प्रकट हो गईं– 'साधु-साधु, साधक धीर, धर्म-धन धन्य राम।' कहते हुए महाशक्ति उनके शरीर में अंतर्धान हो गई।

इस प्रकार निराला ने पौराणिक व प्राक्तन कथा को अपनी नवोन्मेषशालिनी प्रतिभा के बल पर अर्वाचीन व युगानुरूप बना दिया है। आचार्य कुंतक के द्वारा इस संदर्भ में सुझाई गईं दोनों युक्तियों 'विद्यमान का संशोधन' व 'अविद्यमान की कल्पना' का निराला ने बड़ी दक्षता से प्रयोग किया है। उनके समक्ष संशोधन के लिए पाँच सौ वर्ष पूर्व रचित कृतिवास की बंगला रामायण थी, जिसमें उन्होंने प्रभावकारी बदलाव किए हैं। बंगला रामायण में राम जब शक्ति को रावण के

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 21



पक्ष में सक्रिय देखते हैं, तो इतने हताश व हतप्रभ हो जाते हैं कि वे रोते हुए धरा पर धूल में लोटने लगते हैं। उनकी कातर स्थिति देखकर लक्ष्मण और हनुमान भी रोने लगते हैं। सुग्रीव, अंगद, जाम्बवान भी अवश हो जाते हैं। इस प्रसंग का वर्णन करते हुए निराला ने राम को अव्यवस्थित तो दर्शाया है– उनका चेहरा उतरा हुआ है, उनकी जटाएँ खुलकर उनके कंधों पर बिखरी हैं। युद्ध भूमि में रावण को संरक्षित करती शक्ति की भीमा मूर्ति की स्मृति होते ही उनके नेत्र अश्रुपूरित हो जाते हैं, लेकिन वे कृतिवास की रामायण में वर्णित राम के समान रोते हुए धरती में नहीं लोटते। निराला राम को मानवोचित

**निराला राम को मानवोचित रूप में अंकित करते हुए भी रघुकुल नायक के धीरोदात्त रूप की नहीं भूले। लक्ष्मण, विभीषण, हनुमान आदि अन्य सहायक भी बिना कातर हुए मंत्रणा सभा में सकारात्मक भूमिका निभाते हैं। आधुनिक युगानुरूप निराला ने राम को शक्ति का उत्तर शक्ति आराधना से देने की सलाह जाम्बवान द्वारा दिलवाई है।**

रूप में अंकित करते हुए भी रघुकुल नायक के धीरोदात्त रूप की नहीं भूले। लक्ष्मण, विभीषण, हनुमान आदि अन्य सहायक भी बिना कातर हुए मंत्रणा सभा में सकारात्मक भूमिका निभाते हैं। आधुनिक युगानुरूप निराला ने राम को शक्ति का उत्तर शक्ति-आराधना से देने की सलाह जाम्बवान द्वारा दिलवाई है, न कि कृतिवास की रामायण के समान ब्रह्मा जी से।

कृतिवास कृत रामायण में अतिप्राकृत तत्त्वों का सहज समावेश है, यथा देवी द्वारा रावण का पक्ष लेने पर जब राम निराश हो जाते हैं, तब इंद्रादि देवता चिंतित होकर ब्रह्मा जी के पास जाते हैं। ब्रह्मा जी स्वयं जाकर राम को अकालबोधन द्वारा दुर्गा की पूजा की सलाह देते हैं। 'राम की शक्तिपूजा' में यह परामर्श जाम्बवान द्वारा दिखा कर निराला ने मानवोचित सहजता का समावेश किया है। कृतिवास रामायण में पूजा के आठ दिन तक युद्ध रोक दिया जाता है जो उचित प्रतीत नहीं होता। निराला ने इसमें संशोधन कर केवल राम को ही युद्ध से अलग दिखाया है। अन्य योद्धा– लक्ष्मण, अंगद, सुग्रीव, हनुमान आदि पूर्ववत युद्ध में तल्लीन हो जाते हैं। बंगला रामायण में राम चंडी की पूजा परंपरागत विधि से करते हैं। वे बिल्व वृक्ष के नीचे चंडी की मिट्टी की मूर्ति बनाकर अनुष्ठानपूर्वक पूजा सामग्री से देवी माँ की अर्चना करते हैं। अंत में, सिद्धि प्राप्त करने के बाद वे उस प्रतिमा को विसर्जित कर देते हैं। निराला ने शक्ति की मौलिक उद्भावना की है। राम सामने दिखाई दे रहे भूधर में दुर्गा का, दशों दिशाओं में दस भुजाओं का व आकाश में शंकर का तथा गरजते समुद्र में सिंह के रूप की कल्पना करते हैं। वे स्वयं को भी सेवक मानते हुए दुर्गा के सिंह के समान समझते हैं। महाप्राण निराला की यह विराट कल्पना है–

'देखो, बंधुवर, सामने स्थिर जो वह भूधर
शोभित- शत-हरित-गुल्म- तृण से श्यामल सुंदर
पार्वती कल्पना है इसकी मकरंद बिंदु
गरजता चरण प्रांत पर सिंह वह, नहीं सिंधु।

देवी आराधना हेतु भूधर व सागर की इस कल्पना में निराला की राष्ट्रीय चेतना भी व्यंजित हुई है। राष्ट्र के भूगोल व संस्कृति के अनुरूप निराला ने माँ दुर्गा की प्रतिमा की नव कल्पना की है।

वास्तव में कृतिवासकृत रामायण पर भक्तिकालीन धर्म-साधना का प्रभाव है। अतः उस कृति की मूल चेतना धार्मिक व कथ्य पौराणिक है। जबकि निराला उनसे पाँच सौ वर्ष बाद आधुनिक युग में 'राम की शक्तिपूजा' रच रहे थे, अतः उनका दृष्टिकोण मानवतावादी व आधुनिक है। कृतिवास की रामायण में अनुष्ठानपूर्वक अर्चना व भक्ति को प्रतिष्ठित किया

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 22

गया है, जबकि निराला ने 'मानव मन की अपराजेयता' का संदेश दिया।

प्राचीन कथा में संशोधन के अतिरिक्त निराला ने 'अविद्यमान की कल्पना' भी की है। पहली प्रसंगोदभावना जनक वाटिका में राम-सीता के उदात्त प्रेम का अंकन है। युद्धभूमि से खिन्न लौटे राम के हृदय में अचानक उक्त मिलन की स्मृति जाग उठती है। वे क्षण भर के लिए युद्ध के तनाव को भूलकर उस सुखद दृश्य में डूब जाते हैं। निराला की यह दृश्य योजना पूर्व-दीप्ति शैली में सृजित है। ऐसा कोई प्रसंग कृतिवास की रामायण में नहीं था। यह अविद्यमान की सुष्ठु कल्पना है। इसी प्रकार राम के चरणों पर गिरी आँसुओं की दो बूंदे उनकी सेवा में लीन परम भक्त हनुमान को भीतर तक हिला देती हैं। अपने स्वामी की इस कातर दशा को देख वे क्रुद्ध होकर समुद्र के समान गरजते हुए महाकाश को निगलने के लिए ऊपर की ओर आरोहण करते हैं। जिसे देख शिव महानाश की आशंका से चिंतित हो जाते हैं। उनके कहने पर देवी माँ अंजना का रूप धारण कर हनुमान को समझा कर पृथ्वी पर ले आती हैं। इस प्रकरण में हनुमान के रौद्र रूप की प्रस्तुति अत्यंत प्रभावशाली बन पड़ी है। लेकिन इस प्रसंग की उद्भावना अनावश्यक प्रतीत होती है। इसके बिना भी विवेच्य कृति इतनी ही सशक्त व प्रभविष्णु होती।

प्राविधिक दृष्टि से निराला की कोई भी कृति महाकाव्य की कोटि में नहीं आती, फिर भी हिंदी के विद्वान सहर्ष उन्हें महाकवि मानते हैं। इसका कारण निराला की अप्रतिम काव्य प्रतिभा, विलक्षण भावाभिव्यंजना व महाप्राणीय जीवनी शक्ति है। 'राम की शक्ति पूजा' महाकाव्य न होते हुए भी महाकाव्यात्मक औदात्त्य व औदार्य से मंडित है, ऐसा उनके काव्य के प्रकृष्ट आलोचक डॉ. नगेंद्र हों अथवा डॉ. रामविलास शर्मा, सभी मानते हैं। संस्कृत-काव्यशास्त्रियों के अनुसार महाकाव्य की कथा पौराणिक, ऐतिहासिक अथवा बहुश्रुत होनी चाहिए। उसमें प्रबंधात्मक-कौशल्य अपेक्षित होता है। नायक को उच्चकुलोद्भ व धीरोदात्त होना चाहिए। काव्य में वीर, शृंगार अथवा करुण में से किसी एक रस का प्राधान्य होना चाहिए। उसमें युद्ध, यज्ञ, नगर, प्रासाद, प्रकृति, उत्सव का समग्र उल्लेख होना चाहिए, उसकी अभिव्यंजना शैली उदात्त व उत्कृष्ट होनी चाहिए, जो कृति को महाकाव्यात्मक गरिमा प्रदान कर सके। साथ ही उससे महान संदेश का सम्प्रेषण भी हो। पाश्चात्य विद्वानों ने महाकाव्य में विराटता, विलक्षणता व व्यापकता की अपेक्षा की है। लौंजाइनस ने महाकाव्य में उदात्त तत्त्व को अनिवार्य माना है। डॉ. नगेंद्र ने 'राम की शक्तिपूजा' को उदात्तता के आधार पर महाकाव्यात्मक माना है।

इन लक्षणों के आधार पर यदि 'राम की शक्ति पूजा' को परखें, तो इसकी कथा पौराणिक है। सुदीर्घ न होते हुए भी उदात्त है। कथानायक राम रघुकुलवंशी व धीरोदात्त हैं। महाशक्ति के रावण के पक्ष में जाने से वे अल्पकाल के लिए विचलित तो हो जाते हैं, लेकिन

**प्राविधिक दृष्टि से निराला की कोई भी कृति महाकाव्य की कोटि में नहीं आती, फिर भी हिंदी के विद्वान उन्हें सहर्ष महाकवि मानते हैं। इसका कारण निराला की अप्रतिम काव्य प्रतिभा, विलक्षण भावाभिव्यंजना व महाप्राणीय जीवनी शक्ति है। 'राम की शक्ति-पूजा' महाकाव्य न होते हुए भी महाकाव्यात्मक औदात्त्य व औदार्य से मंडित है। डॉ. नगेंद्र ने 'राम की शक्ति पूजा' को उदात्तता के आधार पर महाकाव्यात्मक माना है।**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 23



**'राम की शक्तिपूजा' की जीवनी शक्ति इसके स्रष्टा के समान महाप्राणीय है जो मानव मन की अपराजेयता का बोध कराती है–'वह एक और मन रहा राम का जो न थका'। अनेक प्रायासों के बाद भी जब राम का मार्ग बाधारहित नहीं हो पाता, तो वे कुछ क्षणों के लिए अधीर हो उठते हैं, लेकिन हार नहीं मानते। फिर से उल्लसित हो संघर्ष के लिए तैयार हो जाते हैं। इसी में सफलता एवं विजय का रहस्य निहित है। जीवन-यात्रा में आने वाली बाधाओं व चुनौतियों का सामना करते हुए मानव मन कई बार हार जाता है। वह निराशा व अवसाद से घिर जाता है। लक्ष्य की प्राप्ति उसे अशक्य प्रतीत होने लगती है। उसकी सोच पर नकारात्मकता हावी हो उठती है। वह हथियार डालने को ही होता है कि अचानक उसकी सोयी शक्ति जाग उठती है। वह लक्ष्यप्राप्ति के लिए पुनः प्रयासरत हो जाता है। मानव मन के जीवट की यह सच्चाई निराला के समय में जितनी सार्थक थी, आज भी उतनी ही प्रासंगिक है।**

उनकी चारित्रिक स्थिरता व उदात्तता पूरे काव्य में कहीं भी स्खलित नहीं होती। दुर्गा की उपासना के समय उनके अंतस में पावन उल्लास का प्रस्फुटन उनके चरित्र को औदात्य प्रदान करता है। वीर रस इस कविता का अंगीरस है। इसके सहायक रौद्र व भयानक रसों की भी उचित व्यंजना हुई है। जनक वाटिका में राम सीता के प्रथम मिलन के मनोरम प्रसंग में शृंगार रस की सुंदर व्यंजना हुई है–

नयनों का नयनों, से गोपन, प्रिय संभाषण,
पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान पतन।
काँपते हुए किसलय झरते पराग समुदय।
गाते खग नव जीवन परिचय तरु मलय-वलय।

निराला का भाषा पर परिपूर्ण अधिकार था। उनकी अभिव्यंजना शैली इतनी समृद्ध थी कि कथ्य स्वतः गौरवांवित हो उठता था। साधारण वर्णन व इतिवृत्तात्मकता उनके काव्य में प्रायः अनुपलब्ध है। लाक्षणिकता व व्यंजनात्मकता को ही प्राथमिकता दी गई है। 'राम की शक्तिपूजा' में दृश्य विधान भी दक्षतापूर्वक संयोजित किए गए है। बिम्ब योजना भी आकर्षक व मौलिक है। अलंकृति सहज व स्वाभाविक है। शब्दाडंबर व वाक् स्फीति से निराला सदैव बचते हैं। इस कविता में विशेषकर युद्ध-वर्णन में उनकी भाषा महाप्राण अक्षरों से संवलित समस्तपद प्रधान है।

एक उत्कृष्ट कृति से महान संदेश की अपेक्षा की जाती है। इस कविता की जीवनी शक्ति इसके स्रष्टा के समान महाप्राणीय है, जो मानव मन की अपराजेयता का बोध कराती है– 'वह एक और मन रहा राम का जो न थका'। अनेक प्रायासों के बाद भी जब राम का मार्ग बाधारहित नहीं हो पाता, तो वे कुछ क्षणों के लिए अधीर हो उठते हैं, लेकिन हार नहीं मानते। फिर से उल्लसित हो संघर्ष के लिए तैयार हो जाते हैं। इसी में सफलता एवं विजय का रहस्य निहित है। इसी महान संदेश के बल पर 'राम की शक्तिपूजा' आज भी प्रासंगिक है। जीवन-यात्रा में आने वाली बाधाओं व चुनौतियों का सामना करते हुए मानव मन कई बार हार जाता है। वह निराशा व अवसाद से घिर जाता है। लक्ष्य की प्राप्ति उसे अशक्य प्रतीत होने लगती है। उसकी सोच पर नकारात्मकता हावी हो उठती है। वह हथियार डालने को ही होता है कि अचानक उसकी सोयी शक्ति जाग उठती है। वह लक्ष्यप्राप्ति के लिए पुनः प्रयासरत हो जाता है। मानव मन के जीवट की यह सच्चाई निराला के समय में जितनी सार्थक थी, आज भी उतनी ही प्रासंगिक व युगानुरूप है।

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 24

भारतीय सनातन परंपरा में बौद्धिक विमर्श का विशिष्ट महत्त्व रहा है, जिससे भारत में विभिन्न मत-मतांतरों को फलने- फूलने का अवसर मिला और विभिन्न मतावलंबियों के बीच शास्त्रार्थ की पुष्ट परंपरा विकसित हुई। मत भिन्नता के बावजूद भी एक दूसरे का सदैव सम्मान और आदर किया जाता रहा, जिसकी वजह से भारत में अध्यात्म जैसे गूढ़ विषय पर गहन चिंतन-मनन हो सका और मत-भिन्नता ने मन भिन्नता का स्वरुप ग्रहण नहीं किया। लेकिन 1000 वर्षों के विदेशी आक्रमण के कालखंड में इस स्वतंत्र चिंतन-मनन को ठेस पहुँची। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत आशा थी कि चिंतन-मनन की यह परंपरा पुनः प्रारंभ होगी, परंतु वामपंथियों और तथाकथित नव उदारवादियों की राष्ट्रघातक युग्लबंदियों के कारण बुद्धिजीवियों की खेमेबाजी से यह आशा न केवल धूमिल हुई, वरन् इस खेमेबाजी के चलते बुद्धिजीवियों को वामपंथी और दक्षिणपंथी नामधारी कृत्रिम खेमे में बाँटा। यही नहीं, मत भिन्नता रखने वाले बौद्धिक वर्ग को न केवल नकारा गया वरन् उन्हें तुच्छ और हीन सिद्ध करने के भी कुत्सित प्रयास किए गए। इस बौद्धिक आतंकवाद ने भारतीय चिंतन परंपरा को अपूर्णीय क्षति पहुँचायी है। इससे समसामयिक बौद्धिक विमर्श कितना एकपक्षीय और स्तरहीन हो गया इसको उद्घाटित कर रहे हैं प्रख्यात लेखक आनन्द आदीश–

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 25

# समसामयिक बौद्धिक विमर्श : पाखंडपूर्ण चिंतन का दंश

कांग्रेस नेतृत्व वाली केंद्रीय सरकार के दौरान पद्मभूषण सम्मान से अलंकृत और साहित्य अकादमी द्वारा पुरस्कृत रामचंद्र गुहा वर्तमान भारतीय बौद्धिक जगत् में एक जाना-माना नाम है। अंध नेहरू भक्त होने के कारण वे संघ की वजह-बेवजह आलोचना ही नहीं, उससे घृणा करते हैं। अंग्रेजी भाषा पर अपने अधिकार और विपुल लेखन के बल पर वे एक समाजशास्त्री, पर्यावरणविद्, इतिहासकार और तात्कालिक विषयों के मीमांसाकार के रूप में अपनी विशिष्ट पहचान बनाए हुए हैं। उनकी 'इन दा अनक्वाइट वुड्स ( In the Unquiet Woods) अर्थात् 'बेचैन जंगलों के मध्य', और 'इंडिया आफ्टर गांधी' (India After Gandhi) 'गांधीयुगोत्तर भारत' जैसी कुछ पुस्तकों का बीस से अधिक भाषाओं में अनुवाद भी हुआ है।

कुछ समय पूर्व प्रकाशित एक लेख में गुहा द्वारा उठाए गए प्रश्न 'व्हेअर आर इंडियाज कंजरवेटिव इंटेलेक्चुअल्स (Where are India's Conservative Intellectuals?) अर्थात् भारतीय दक्षिणपंथी (राष्ट्रवादी!) बुद्धिजीवी कहाँ खो गए', की मीमांसा आवश्यक है, क्योंकि पूर्वाग्रहों से ग्रसित उनके लंबे लेख की, कहने के लिए तो, मूल भावना के केंद्र में समसामयिक भारतीय सामाजिक-राजनीतिक जीवन में पसरा वह अंतर्विरोध है जो केंद्र सहित अधिकांश राज्यों में भारतीय जनता पार्टी के सत्तासीन होने के बाद भी तथाकथित दक्षिणपंथी बुद्धिजीवियों की संपूर्ण अनुपस्थिति की कोख से उपजा है। जहाँ एक ओर अमेरिकी रिपब्लिकन, ब्रिटिश कंजरवेटिव और जर्मन क्रिश्चियन डेमोक्रेटिक सत्तासीन पार्टियों को बौद्धिक बल प्रदान करने वाले दिग्गज विचारकों की एक समृद्ध

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 26

और लंबी शृंखला विद्यमान है, वहाँ भारत में सत्तासीन भारतीय जनता पार्टी के अंदर और बाहर उसके विचारों को बौद्धिक पुष्टिवर्धक तत्त्व प्रदान करने वाले बुद्धिजीवियों का भयावह अकाल है। जबकि संपूर्ण लेख का ताना-बाना राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को प्रायः दी जाने वाली गालियों के दीमक लगे अड्डे पर टिका है।

गुहा की स्पष्टोक्ति है कि अपने 40 वर्ष लंबे बौद्धिक जीवन में उन्होंने जिन सैंकड़ों समाजशास्त्रियों और इतिहासकारों के साथ विचार-विमर्श किया है उनमें से कितने ही मार्क्सवादी, माओवादी, अंबेडकरवादी, लोहियावादी, नेहरूवादी रहे हैं, परंतु किसी भी अध्यापन कक्ष अथवा सेमीनार में एक भी दक्षिणपंथी अध्येता अथवा विचारक/बुद्धिजीवी का उपस्थित न होना, उनके लिए विस्मयकारी रहा है और इस स्थिति में आज भी कोई गुणात्मक परिवर्तन होता नजर नहीं आता। इससे गुहा न तो आह्लादित नजर आते हैं, न आहत। हतप्रभ लगते हैं। यह उनकी मासूमियत है या मुखौटा, पाठक स्वयं तय करें। उनके इस लंबे आलेख में मात्र दो सत्य कथन माने जा सकते हैं (1) सम-सामायिक बौद्धिक विमर्श में वामपंथियों (कम्यूनिस्टों) का बोलबाला और (2) दक्षिण दक्षिणपंथियों (राष्ट्रवादियों) का दिवाला! वास्तव में ये एक ही सिक्के के दो पहलू कहे जा सकते हैं, अर्थात् कुल लेख का दशांश!

शेष संपूर्ण लेख में गुहा जाने-अनजाने तथ्य और सत्य से कहीं खिलवाड़ करते नजर आते हैं तो कहीं किनारा, जिसके कारण उनका यह दस्तावेज अन्तर्विरोधों, पूर्वाग्रहों और प्रवंचनाओं से भरा पड़ा है।

क्योंकि उनकी प्रास्ताविक मान्यता ही–अर्थात् जिस दल की सरकार है, उसकी बुद्धिजीवियों की जमात में भी धमक सुनाई पड़नी चाहिए अथवा यदि बुद्धिजीवियों में किसी विचारधारा विशेष की बहुतायत है तो स्वतः ही सत्ता उसकी चेरि होनी चाहिए– दोषपूर्ण है। अतः उनके निष्कर्ष निरापद हो ही नहीं सकते।

गुहा द्वारा राजनीतिक संस्थाओं अथवा दलों का घिसी-पिटी शैली में दक्षिणपंथी, वामपंथी, उदारपंथी कहकर वर्गीकरण किया गया है और इनकी परिभाषा उन्होंने सीधे-सीधे जर्मन समाजशास्त्री कार्ल मैनहेम की पुस्तक 'आइडियोलॉजी एण्ड यूटोपिया (Ideology and Utopia) अर्थात् विचारधारा और आदर्शलोक', से उठा ली है। जिसका सार-संक्षेप है कि दक्षिणपंथी पुरातन का, वामपंथी वर्तमान का और उदारपंथी भावी का पुजारी होता है। दक्षिणपंथी समाज जीवन में सरकार के न्यूनतम दखल का पक्षधर है तो वामपंथी सरकार को ही माई-बाप बनाने का और उदारपंथी दोनों के बीच का घाल-मेल। दक्षिणपंथी पूँजीवाद का मसीहा है और वामपंथी सर्वहारा का मार्क्स!

असल में मैनहेम की उपर्युक्त पुस्तक यूरोपियन

**गुहा द्वारा राजनीतिक संस्थाओं अथवा दलों का घिसी-पिटी शैली में दक्षिणपंथी, वामपंथी, उदारपंथी कहकर वर्गीकरण किया गया है और इनकी परिभाषा उन्होंने सीधे-सीधे जर्मन समाजशास्त्री कार्ल मैनहेम की पुस्तक 'आइडियोलॉजी एंड यूटोपिया अर्थात् विचारधारा और आदर्शलोक', से उठा ली है।गुहा ने विस्तारवादी पश्चिमी देशों की अवधारणाओं और परिभाषाओं को भारत पर लादकर घोर अन्याय किया है तथा मानवतावादी भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को, जिसका प्रतिनिधित्व आज संघ परिवार करता है, दक्षिणपंथी साँचे में घेर कर उसके अस्तित्व को ही अवांछनीय घोषित करने का दुःसाहस किया है।**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 27



**होना तो यह चाहिए था कि राष्ट्र को एक जीवंत इकाई मानकर, राष्ट्रवादी और राष्ट्रवाद विरोधी दो खेमों में रखकर वैचारिक आधार पर बंटे दलों के संबंध में विचार किया जाता। राष्ट्र की संकल्पना को नकारा नहीं जा सकता। यह न देश के हित में है और न ही विश्व के। हाँ, यह राष्ट्रवाद विश्वव्यापी मनुष्य समुदाय ही नहीं जीव मात्र, बल्कि संपूर्ण प्रकृति के साथ समताल होना चाहिए, हितकारी होना चाहिए। प्रत्येक राष्ट्र की अपनी प्रकृति और प्रवृत्ति होती है जिसका सम्मान और संवर्धन अंततः वैश्विक कल्याण के लिए होना ही चाहिए। इस कसौटी पर भारतीय राष्ट्रवाद शत-प्रतिशत खरा उतरता है।**

उपनिवेशवाद और औद्योगिक क्रांति की कोख से जन्मी संकुचित पश्चिमी राष्ट्रवादी देशों की गलाकाट प्रतिस्पर्धा और विस्तारवादी राज्य-लिप्सा के परिणामस्वरूप लड़े गए प्रथम विश्वयुद्ध की विभीषिका से आक्रांत मानसिकता की उपज थी, जो जर्मन भाषा में सन् 1929 में और अंग्रेजी अनुवाद के रूप में 1936 में प्रकाशित हुई थी। तब तक द्वितीय महायुद्ध के बादल भी पृथ्वी के गगनांचल पर मंडराने शुरू हो गए थे। परंतु पश्चिम के उस परिवेश और तत्संबंधी परिभाषाओं की गुलामी में जकड़ी उस मानसिकता का भारत की वास्तविक परिस्थितियों से दूर-दूर तक कोई रिश्ता-नाता नहीं था। यदि कोई था भी तो मात्र इतना कि साम्राज्यवादी तथा शोषक अंग्रेजों ने भारतमाता के लाखों लाड़ले जवानों को अपने स्वार्थहित में भारत से हजारों कोस दूर लड़े जा रहे युद्ध की धधकती ज्वालाओं में झोंक दिया था।

गुहा ने विस्तारवादी पश्चिमी देशों की अवधारणाओं और परिभाषाओं को भारत पर लादकर घोर अन्याय किया है तथा मानवतावादी भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद को, जिसका प्रतिनिधित्व आज संघ परिवार करता है, दक्षिणपंथी साँचे में घेर कर उसके अस्तित्व को ही अवांछनीय घोषित करने का दुःसाहस किया है। राष्ट्रवाद के विरुद्ध गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर की जिन एक-दो कविताओं और टिप्पणियों को आधार मानकर गुहा समान बुद्धिजीवी राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा उद्घोषित भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की कटु आलोचना करते हैं, वे जाने-अनजाने इस तथ्य की अनदेखी करते हैं कि गुरुदेव का विरोध पश्चिमी संकुचित और विस्तारवादी राष्ट्रवाद का था, न कि शांतिकामी मानवतावादी, सहिष्णु, गौरवशाली भारतीय राष्ट्रवाद का, जिसकी अभिव्यक्ति उनके संपूर्ण गद्य-पद्य (नोबेल पुरस्कार प्राप्ति का आधार बनी 'गीतांजलि' सहित), रवीन्द्र संगीत और कला ही नहीं शांति निकेतन के रूप में प्राचीन भारतीय गुरुकुल परंपरा के युगानुरूप प्रयोग तक में गहरे तक प्रतिष्ठित है।

महात्मा गांधी के संपूर्ण चिंतन-सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय और प्रयोगों के मूल में 'हिंदू दर्शन प्रदत्त जीव मात्र की कल्याण कामना एवं भावना नहीं तो क्या हिटलर, स्टालिन, चर्चिल और माओ की साम्राज्यवादी, नसली, विस्तारवादी, अतीव अतृप्त भौतिकतावादी भूख जमकर बैठी है?

अतः गुहा का पहला असत्य कथन भारतीय राष्ट्रवाद को दक्षिणपंथी करार देने संबंधी है।

होना तो यह चाहिए था कि राष्ट्र को एक जीवंत इकाई मानकर, राष्ट्रवादी और राष्ट्रवाद विरोधी दो खेमों में रखकर वैचारिक आधार पर बंटे दलों के संबंध में विचार किया जाता। राष्ट्र की संकल्पना को नकारा नहीं जा सकता। यह न देश के हित में है और न ही विश्व के। हाँ, यह राष्ट्रवाद विश्वव्यापी मनुष्य समुदाय ही नहीं जीव मात्र, बल्कि संपूर्ण प्रकृति के साथ समताल होना

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 28

चाहिए, हितकारी होना चाहिए। प्रत्येक राष्ट्र की अपनी प्रकृति और प्रवृत्ति होती है जिसका सम्मान और संवर्धन अंततः वैश्विक कल्याण के लिए होना ही चाहिए। इस कसौटी पर भारतीय राष्ट्रवाद शत-प्रतिशत खरा उतरता है। जीवन के विविध पहलुओं यथा धार्मिक परमार्थिक आदि पर मत-भिन्नता हो सकती है, होनी भी चाहिए, परंतु राष्ट्र के स्वत्व और उसके संरक्षण तथा संर्वधन अर्थात् उसकी अखंडता पर प्रश्नचिह्न अथवा हमला कहीं भी, कभी भी स्वीकार नहीं किया जा सकता।

**भारत में दो ही विचार प्रवाह दृष्टिगोचर होते हैं-भारतीय राष्ट्रवादी जिसकी अग्रिम पंक्ति में खड़ा है राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और उस राष्ट्रवाद के विरोधी जिसका प्रतिनिधित्व करता है मार्क्सवाद, देश के विभाजन के लिए जिम्मेदार साम्प्रदायिक जिहादी-वहाबी तथा दूरस्थ पूर्वोत्तर सहित जनजाति बहुल क्षेत्रों में अलगाव का विष-बीज बोने में संलग्न चर्च के मिशनरी।**

इस आधार पर भारत में दो ही विचार प्रवाह दृष्टिगोचर होते हैं– भारतीय राष्ट्रवादी जिसकी अग्रिम पंक्ति में खड़ा है राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और उस राष्ट्रवाद के विरोधी जिसका प्रतिनिधित्व करता है मार्क्सवाद, देश के विभाजन के लिए जिम्मेदार सांप्रदायिक जिहादी-वहाबी तथा दूरस्थ पूर्वोत्तर सहित जनजाति बहुल क्षेत्रों में अलगाव का विष-बीज बोने में संलग्न चर्च के मिशनरी।

भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की लंबी ऐतिहासिक विश्व कल्याणकारी परंपरा से गुहा अपरिचित नहीं हैं। अतः उन्हें इस वर्गीकरण को स्वीकार करने में क्यों एतराज होना चाहिए?

गुहा का दूसरा बड़ा झूठ राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से संबंधित है, क्योंकि उनका संघ विषयक चिंतन पूरी तरह असत्य और अज्ञान पर आधारित है; कम्यूनिस्टों और उनके छुटभैय्यों से आयातित है। उनका यह फतवा कि 'संघ और उसके विचारक दक्षिणपंथ नहीं; धर्मांधता, असहनशीलता और प्रतिक्रियावाद का प्रतिनिधित्व करते हैं', पढ़कर गुहा की सोच पर क्रोध नहीं, दया आती है। विशेष रूप से तब जबकि उनका यह निष्कर्ष किसी गंभीर साहित्य अथवा गवेशणात्मक अध्ययन पर आधारित न होकर, किशोरावस्था में मात्र कुछ महीने संघ शाखा में गए देशराज गोयल नामक उस व्यक्ति की पैम्फलेटनुमा एकमात्र पुस्तक पर टिका है जो बीसवीं सदी के छठे-सातवें दशक में छपी कांग्रेसी सुभद्रा जोशी की सेक्यूलर डेमोक्रेसी (Secular Democracy) नामक गोयबली पत्रिका में दो-चार संघ विरोधी लेख लिखकर सुर्खियों में आ गया था। मुझे संदेह है कि रामचंद्र गुहा को श्री गुरुजी गोलवलकर, बाबासाहेब आप्टे, दीनदयाल उपाध्याय, दत्तोपंत ठेंगड़ी, एकनाथ रानाडे, पु. ग. सहस्रबुद्धे, लालकृष्ण आडवाणी, डॉ. मुरली मनोहर जोशी, वचनेश त्रिपाठी, डॉ. भाई महावीर, बलराज मधोक, डॉ. स्वराज प्रकाश गुप्ता, डॉ. वेद प्रकाश नंदा, सुधाकर राजे, गोरी नाथ रस्तोगी, केवलराम मलकानी, देवेंद्र स्वरूप अग्रवाल, आदि गंभीर संघ विचारकों के लेखन और साहित्य की जानकारी भी है क्या; पढ़ना तो बड़ी दूर की बात है। गुरुजी के विचारों का पुंज 'ए बंच ऑफ थॉट्स' (A Bunch of Thoughts), पं दीनदयाल उपाध्याय कृत 'एकात्म मानवतावाद' (Integral Humanism)' और मलकानी लिखित 'द स्टोरी ऑफ आर.एस.एस.' (The story of RSS) सहित पर्याप्त मात्रा में संघ संबंधी साहित्य अब तो अंग्रेजी भाषा में भी उपलब्ध है।

संघ की शाखा ही नहीं, संघ परिवार के समस्त

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 29



कार्य-व्यवहार भी पूरी तरह पारदर्शी तरीके से समाज में खुले में चलते हैं। गुहा थोड़ा कष्ट कर वहाँ जाते या संघ के किसी भी कार्यालय अथवा संस्थान में महीनों, या फिर बरसों भी रहकर अध्ययन, मनन चिंतन करते तो मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि संघ के कार्यकर्ता उनको भरपूर सहयोग ही नहीं देते, प्रसन्नतापूर्वक उनके आवास, भोजन, नाश्ते आदि की भी व्यवस्था कर देते। तत्पश्चात गुहा जिस भी निष्कर्ष पर पहुँचते, उसकी साख होती। उन्हीं की भाषा में उनका जमीनी हकीकत (Field- view) पर आधारित निष्कर्ष होता न कि

**गुहा इतनी बौद्धिक ईमानदारी बरतना क्यों नहीं गंवारा करते कि जिसे वे नेहरूवाद कहकर महिमामंडित करना चाह रहे हैं उसी के चलते चीनी ड्रेगन शांतिप्रिय बौद्ध राष्ट्र तिब्बत को निगल गया, लाखों एकड़ भारतीय भूमि को हड़प गया, भारत को इतिहास की सर्वाधिक अपमानजनक पराजय का विष चखने पर मजबूर कर गया। उसी नेहरूवाद का परिणाम है कि चीन और पाकिस्तान जैसे दो-दो धूर्त दुश्मन हमारी छाती पर आज तक मूंग दल रहे हैं।**

पीलिया ग्रसित (Jaundiced-view) निष्कर्ष जो उनके विश्व के विशालतम संगठन के अतीव आदरणीय पूर्व सरसंघचालक श्री गुरुजी गोलवलकर के लिए मात्र ग्रुप्स सरसंघचालक (Group's Sarsanghchalak) समान शब्द प्रयोग में प्रकट होता है।

वे बौद्धिक विमर्श में तथाकथित दक्षिणपंथी (सच में राष्ट्रवादी) विद्वानों के अभाव पर सीधी सच्ची-सटीक चर्चा तो करते ही नहीं, पाठक को उदारवादी और समाजवादी विचारकों के राष्ट्रवादी स्वरूप के विषय में भी सूचित नहीं करते। यह गुहा का तीसरा असत्य है-- बौद्धिक छल। उदाहरण के लिए वे गोपालकृष्ण गोखले की ही नहीं संपूर्ण समाजवादी नेतृत्व के राष्ट्रवादी पक्ष की अवहेलना करते हैं। नेहरू जी को अजीबो-गरीब आधुनिकतावादी-समाजवादी जैसे बेतुके विशेषण से विभूषित करते हैं। नेहरूवाद जैसे किसी वायावी वाद को पाठकों पर थोपने का असफल प्रयास करते हैं। यह बताने की कृपा नहीं करते कि डिस्कवरी ऑफ इंडिया (Discovery of India) उनकी कौन सी और कितनी मौलिक खोज का परिणाम है, कितनी पश्चिम से आयातित। नेहरू जी के अपने शब्दों में वे स्वयं 'संयोगवश हिंदू हैं'। गुहा इतनी बौद्धिक ईमानदारी बरतना क्यों नहीं गंवारा करते कि जिसे वे नेहरूवाद कहकर महिमामंडित करना चाह रहे हैं उसी के चलते चीनी ड्रेगन शांतिप्रिय बौद्ध राष्ट्र तिब्बत को निगल गया, लाखों एकड़ भारतीय भूमि को हड़प गया, भारत को इतिहास की सर्वाधिक अपमानजनक पराजय का विष चखने पर मजबूर कर गया। उसी नेहरूवाद का परिणाम है कि चीन और पाकिस्तान जैसे दो-दो धूर्त दुश्मन हमारी छाती पर आज तक मूंग दल रहे हैं और भारत की आजादी के 70 वर्ष बाद भी भारत गरीबी से जूझ रहा है। नेहरू-गांधी के नाम पर छद्म धर्मनिरपेक्षतावाद के चोले में सत्तालोभी वंशवादी तत्त्व तथा अराष्ट्रीय कम्यूनिस्ट, कट्टर सांप्रदायिक तत्त्वों से सांठ-गांठ कर भारतीय सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के विरुद्ध षड्यंत्र रचने में व्यस्त हैं। इसी नेहरूवाद की छत्रच्छाया और कृपादृष्टि का परिणाम है कि राष्ट्रविरोधी कम्यूनिस्ट बुद्धिजीवी धूमकेतु की तरह भारत के बौद्धिक आकाश पर मंडरा रहे हैं।

गुहा का शब्द कौशल देखते ही बनता है जब वे बाबा साहेब अंबेडकर, डॉ. राममनोहर लोहिया, जय प्रकाश नारायण आदि समाजवादियों के राष्ट्रवादी व्यक्तित्व और कृतित्व की सच्चाई को उनकी उच्च शिक्षा क्रमशः इंग्लैंड, जर्मनी और अमेरिका में होने के

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 30

तथ्य के झीने से बुर्के में छिपाने का प्रयत्न करते हैं। उस दस्तावेज की चर्चा तक नहीं करते जिसमें डॉ. भीमराव अंबेडकर ने कम्यूनिस्टऔर उनकी विचारधारा की धज्जियाँ उड़ायी हैं। इस तथ्य से भी आँख मूंद लेते हैं कि लोहिया के समाजवाद में रामायण मेला और भारत-पाकिस्तान महासंघ जैसी अवधारणाएँ मूलबद्ध हैं। इंदिरा गांधी की आपातकालीन तानाशाही के विरुद्ध जयप्रकाश नारायण और संघ की आपसी समझ और साझे संघर्ष की चर्चा तक करने से वे कतराते हैं। स्वातंत्र्यवीर सावरकर को कट्टर हिन्दुत्ववादी घोषित कर इस तथ्य को छिपा ले जाते हैं कि सावरकर

**गुहा ने जिन तथाकथित ख्यातनामा बुद्धिजीवियों के नाम गिनाये हैं क्या उनमें से अधिकांश एक दूसरे के हित साधक और प्रायोजक की भूमिका नहीं निबाहते? क्या विदेशी प्रेस, पैसा और प्रसिद्धि का उपयोग हिंदू राष्ट्रवाद को लांछित करने के लिए नहीं किया जाता? मानवाधिकारियों के रूप में, जिनमें गुहा के कितने ही चहेते बुद्धिजीवी भी शामिल हैं, फलफूल रही भारतद्रोही विषबेल गुहा को दिखाई नहीं देती।**

छुआछूत और महिला-उत्पीड़न जैसी सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध लड़ने वाले योद्धा ही नहीं थे, किसी भी अन्य समाज सुधारक से अधिक उग्र थे।

गुहा स्वयं दिल्ली विश्वविद्यालय के स्नातक रहे हैं अतः यह बताना तो आवश्यक समझते हैं कि देश के मूर्धन्य अर्थशास्त्रियों में से एक एवं दिल्ली विश्वविद्यालय के ही पूर्व उप-कुलपति तथा प्रतिष्ठित दिल्ली स्कूल आफ इकनामिक्स के संस्थापक डॉ. वी.के.आर.वी. राव नेहरू और गांधी के प्रशंसक थे, परंतु बड़ी चतुराई से यह तथ्य छिपा जाते हैं कि डॉ. राव स्वामी विवेकानंद के परम भक्त भी थे। तभी तो उन्होंने दिल्ली स्कूल ऑफ इकनामिक्स के कांफ्रेस-हाल का नाम ही स्वामी विवेकानंद के नाम पर ही नहीं रखा, अपितु स्वामीजी के उस अत्यंत प्रेरणास्पद वाक्य को भी मंच के प्रमुखतम स्थान पर अंकित कराया जिसमें उन्होंने बार-बार पुण्यभूमि भारत में जन्म लेने की कामना व्यक्त की है। स्वामी विवेकानंद से भी बड़ा हिंदू-राष्ट्रवादी विश्व में कोई हुआ है क्या?

डॉ. रामचंद्र गुहा का चौथा बौद्धिक छल यह है कि उन्होंने बुद्धिजीवियों की बहुत ही संकुचित परिभाषा की है, जिसमें समाजशास्त्रियों, राजनीतिशास्त्रियों अर्थशास्त्रियों, इतिहासकारों के साथ साहित्यकारों, दार्शनिकों आदि के लिए कोई स्थान नहीं है। इसी का परिणाम है कि राष्ट्रवादी बुद्धिजीवियों की गणना तीन संख्या तक, (इतिहासकार डॉ. रमेशचंद्र मजूमदार, डॉ राधामुकुद मुखर्जी और जी. एस. घुर्ये) तक सिमट कर रह गयी है। डॉ. सुब्रह्मण्यम स्वामी और अरुण शौरी की भी थोड़ी चर्चा करने की कृपा कर दी है। परंतु महर्षि अरविंद, डॉ. राधाकृष्णन, वेदविद् सात्वलेकर, डॉ. वासुदेव शरण अगव्राल, कन्हैया लाल माणिक लाल मुंशी, डॉ. रघुवीर, डॉ. फतेह सिंह, डॉ. लोकेशचंद्र, अज्ञेय, डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी, जय शंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, महादेवी वर्मा, रामधारी सिंह दिनकर, विद्यानिवास मिश्र, सीताराम गोयल, रामस्वरूप, गिरी लाल जैन, धर्मवीर भारती, राजीव मेहरोत्रा समान सैकड़ों विचारकों और साहित्यकारों को गुहा महोदय शायद इसलिए बुद्धिजीवियों में नहीं गिनते क्योंकि वे अंध नेहरू भक्त अथवा कम्यूनिस्ट ढिंढोरची न होकर प्रखर राष्ट्रवादी हैं। शायद इसलिए भी कि उन्होंने कम्यूनिस्टों की तर्ज पर बौद्धिक दादागिरी नहीं की, तालीबानी तांडव के लहजे में अपने विरोधी विचारकों को प्रताड़ित नहीं किया। गुहा ने जिन तथाकथित ख्यातनामा बुद्धिजीवियों के

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 31



नाम गिनाए हैं क्या उनमें से अधिकतर एक दूसरे के हित साधक और प्रायोजक की भूमिका नहीं निबाहते? क्या विदेशी प्रेस, पैसा और प्रसिद्धि का उपयोग हिंदू राष्ट्रवाद को लांछित करने के लिए नहीं किया जाता? मानवाधिकारियों के रूप में, जिनमें गुहा के कितने ही चहेते बुद्धिजीवी भी शामिल हैं, फलफूल रही भारतद्रोही विषबेल गुहा को दिखाई नहीं देती। असहिष्णुता की गाली की ओट में विधिवत निर्वाचित नरेंद्र मोदी सरकार को अस्थिर करने के लिए षड्यंत्र रचने के जिम्मेदार कई पेशेवर बुद्धिजीवियों के विषय में गुहा मौन क्यों हैं? उस षड्यंत्र के कुछ ही समय बाद प्रकाशित अंग्रेजी पुस्तक

**अपने जन्म से ही छुआछूत के पापाचार से कोसों दूर, जाति-विहीन हिंदू समाज की रचना में रत राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की तत्संबंधी तड़प को संगठन के तृतीय सरसंघचालक, जो बाल्यावस्था से ही संघ के बिल्कुल प्रारंभिक स्वयं सेवकों में से एक थे, श्री बालासाहेब देवरस ने संक्षिप्ततम शब्दों में बलिष्टतम अभिव्यक्ति सन् 1973 में तब दी जब उन्होंने घोषणा की कि 'यदि अस्पृश्यता पाप नहीं है, तो दुनिया का कोई भी कुकर्म पाप नहीं है'।**

'वर्ड्स मैटर (Words matter) अर्थात् शब्दों का मूल्य होता है' राष्ट्रवाद विरोधी प्रायोजित प्रवृत्ति का जीवंत प्रमाण है जिसमें प्रकाशित बांग्लादेश में दिए गए वक्तव्य के अपने लेख में सुश्री नयनतारा सहगल, मामा जी की तर्ज पर इतना ही कहकर संतोष नहीं कर लेती कि वे स्वयं को सांस्कृतिक दृष्टि से आधा मुसलमान समझती हैं, अपितु प्रफुल्लित हैं कि अब नेपाल का हिंदू राष्ट्राधारित के स्थान पर एक धर्मनिरपेक्ष प्रजातांत्रिक संविधान है। यहाँ यह बताना भी असंगत नहीं होगा कि इस पुस्तक का प्रकाशक भी वही पेंग्विन समूह है जो हिंदू देवी-देवताओं को भद्दी गालियों से भरी पुस्तक 'दा हिंदूज़: एन आल्टरनेटिव हिस्ट्री' (The Hindus : An Alternative History) की कुख्यात अमेरीकी लेखिका वेंडी डोनीजर का। इसे मात्र संयोग नहीं कहा जा सकता।

गुहा का पाँचवा और सर्वाधिक भोंड़ा असत्य तब उजागर होता है जब वे हिंदुत्ववादियों पर घुमाफिरा कर आरोप लगाते हैं कि उन्होंने गांधी जी और डॉ. भीमराव अंबेडकर को अस्पृश्यता को चुनौती देने के कारण गैर-हिंदू घोषित करने के लिए कोई अभियान चलाया था।

महर्षि दयानंद और उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज द्वारा छुआछूत उन्मूलन के लिए किए गए संघर्ष को उनके कट्टर से कट्टर विरोधी भी सराहते हैं। संघ में तो एक दूसरे स्वयंसेवक की जाति के विषय में अनभिज्ञता प्रायः जीवन भर बनी रहती है। कोई अद्यतन उदाहरण ही देना हो तो संध के वरिष्ठतम प्रचारकों में से एक श्री सोहनसिंह जी का दिया जा सकता है जिनका 4 जुलाई 2015 में 92 वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। सन् 1943 से प्रारंभ उनके आजीवन प्रचारक काल में कभी प्रसंग ही नहीं आया कि उनकी जाति का भान तक किसी को हो पाता। हाँ, संघ से असंपृक्त कोई व्यक्ति उनकी 6 फुट लंबी बलिष्ठ काय-काठी को देखकर यही अंदाजा लगा सकता था कि सोहनसिंह जी राजपूत क्षत्रीय रहे होंगे; जबकि उनकी वास्तविक जाति यादव थी। यह जानकारी संघ स्वयंसेवकों को भी तब हुई जब दिल्ली के निगमबोध घाट पर उनके दाह संस्कार के समय मंत्रोच्चार के लिए अचारज ने मुखाग्नि देने वाले उनके भतीजे से सोहनसिंह जी के कुल-गोत्र के विषय में पूछा। अपने जन्म से ही छुआछूत के पापाचार से कोसों दूर, जाति-विहीन हिंदू समाज की रचना में रत राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की तत्संबंधी तड़प को संगठन के तृतीय सरसंघचालक, जो बाल्यावस्था से ही संघ के बिल्कुल प्रारंभिक स्वयं सेवकों में से एक

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 32

थे, श्री बालासाहेब देवरस ने संक्षिप्ततम शब्दों में बलिष्ठतम अभिव्यक्ति सन् 1973 में तब दी जब उन्होंने घोषणा की कि 'यदि अस्पृश्यता पाप नहीं है, तो दुनिया का कोई भी कुकर्म पाप नहीं है'।

एक अन्य अत्यंत हेय और हास्यास्पद आरोप गुहा संघ पर परोक्ष रूप से यह लगाते हैं कि वह लैंगिक अल्पसंख्यकों (Sexual Minorities) अर्थात् समलैंगिक स्त्री -पुरुषों के प्रति भेदभाव बरतता है। गुहा जी, अच्छा हो कि आप ब्रिटिश दार्शनिक रोज़र स्क्रूटन लिखित 1986 में प्रकाशित पुस्तक 'सैक्सुअल डिज़ायर (Sexual Desire) अर्थात् कामवासना' को भी पढ़ने का कष्ट करें। स्क्रूटन जो प्रसिद्ध दार्शनिकद्वय इमैन्युअल कांट और फ्रैड्रिक हीगल से प्रभावित हैं, बेलाग शब्दों में कहते हैं कि मानव की काम-क्रिया जातीय संरक्षण और संवर्धन की नैसर्गिक इच्छा और आवश्यकता की पूर्ति का साधन है न कि बेलगाम असंयमित पशुवत् प्रवृत्ति और स्वैच्छाचार। स्क्रूटन यदि समलैंगिक संबंधों को स्वार्थप्रेरित और पतनोन्मुख प्रक्रिया की संज्ञा देते हैं तो क्या अपराध करते हैं, इनके प्रति भेदभाव करते हैं।

**'हिंदुत्व के पुनर्जागरण से न केवल संकटापन्न करोड़ों भारतीयों को राहत मिलेगी अपितु शेष संसार को भी, क्योंकि भौतिकवादी पश्चिमी सभ्यता के मुकाबले भारत मनुष्य के आध्यात्मिक पक्ष पर अधिक बल देता है। भारत के अतिरिक्त अन्य कोई भी देश मानव सभ्यता को नवोंमेष प्रदान करने में सक्षम सही संश्लिष्ट-दर्शन प्रदान नहीं कर सकता।'**

**-डॉ श्यामा प्रसाद मुखर्जी**

हर ऊटपटांग बात और बर्ताव को प्रगतिवाद बताने वालों को यह भी ध्यान रखना चाहिए कि अब तो आयुर्विज्ञान के वैज्ञानिक भी सिद्ध कर चुके हैं कि सगोत्रीय यौन संबंध जानलेवा बीमारियों के जनक हैं, तो फिर समलैंगिकता क्या कहर बरपायेगी!

गुहा के छठे असत्य का सार उनके इस कथन में छिपा है कि हिंदुत्ववादी घृणा और विजेता भाव का अजीबो-गरीब मिश्रण है (A Curious Combination of Xenophobia and Triumphalism) क्योंकि वे एक ओर मैकाले, मिल और मार्क्स जैसे विदेशी प्रभाव को दूर रखना चाहते हैं और दूसरी ओर दावा करते हैं कि हिंदू अन्य सभ्यताओं और राष्ट्रों के मुकाबले श्रेष्ठतम संस्कृति तथा ऋषि परंपरा के वारिस हैं। अपने कथन के समर्थन में गुहा भारतीय जनसंघ के संस्थापक डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी के दिसंबर 1944 में बिलासपुर (मध्य प्रदेश) में दिए गए उस वक्तव्य को प्रस्तुत करते हैं जिसमें डॉ. मुखर्जी ने कहा था कि 'हिंदुत्व के पुनर्जागरण से न केवल संकटापन्न करोड़ों भारतीयों को राहत मिलेगी अपितु शेष संसार को भी, क्योंकि भौतिकवादी पश्चिमी सभ्यता के मुकाबले भारत मनुष्य के आध्यात्मिक पक्ष पर अधिक बल देता है। भारत के अतिरिक्त अन्य कोई भी देश मानव सभ्यता को नवोन्मेष प्रदान करने में सक्षम सही संश्लिष्ट-दर्शन प्रदान नहीं कर सकता।'

गुहा को इस तथ्य पर भी आपत्ति है कि वेद प्राचीनतम एवं गीता तथा उपनिषद् गंभीरतम दार्शनिक ग्रंथ हैं। क्यों नहीं गुहा अपनी आपत्ति के समर्थन में कोई सबूत पेश करते?

सारा संसार इस सत्य को स्वीकार करता हो तो करे, गुहा का 'टेसू यहीं अड़ा' रहेगा। शायद वे चाहते हैं कि भारत मानसिक गुलामी का कचरा सदा-सर्वदा ऐसे ही ढोता रहे, जैसे आजादी से पूर्व ढो रहा था।

सातवें असत्य के द्वारा गुहा महान् राष्ट्रवादी इतिहासकारों और समाज शास्त्रियों को अत्यंत लचर तर्क द्वारा चुनौती देने का दुःसाहस करते हैं। सच बात

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 33



तो यह है कि डॉ. रमेशचंद्र मजूमदार, डॉ. राधाकुमुद मुखर्जी और वर्तमान भारतीय समाजशास्त्र के जनक डॉ. जी.एस. घुर्ये की बेजोड़ गवेषणात्मक उपलब्धियों और खोजपूर्ण ग्रंथों के स्तर तक पहुँचने के लिए एक जन्म पर्याप्त नहीं होगा।

सन् 1888 में जन्मे डॉ. मजूमदार ने 1918 में प्रकाशित अपनी थिसिस में यह स्थापित किया कि किसी भी राष्ट्रोत्थान के प्रयत्न की सफलता के लिए सामाजिक सहयोग ओर संगठन नितांत आवश्यक है जिसकी आज के भारतीय समाज में भारी कमी है। परंतु भूतकाल में

**किसी भी राष्ट्रोत्थान के प्रयत्न की सफलता के लिए सामाजिक सहयोग ओर संगठन नितांत आवश्यक है जिसकी आज के भारतीय समाज में भारी कमी है। परंतु भूतकाल में स्थिति बिल्कुल भिन्न थी। उस समय सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक सभी क्षेत्रों में भारतवर्ष में अद्‌भुत सहयोग और संगठन की भावना व्याप्त थी। - डॉ. रमेश चंद्र मजूमदार**

स्थिति बिल्कुल भिन्न थी। उस समय सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक सभी क्षेत्रों में भारतवर्ष में अद्‌भुत सहयोग और संगठन की भावना व्याप्त थी जिसके प्रमाण स्वरूप डॉ. मजूमदार परिवार प्रणाली, जनपद व्यवस्था, गणतंत्रों की व्यवस्था, व्यापारिक गिल्डस आदि के ठोस सबूत पेश करते हैं। इसी संदर्भ को आगे बढ़ाते हुए उन्होंने दो अन्य महत्त्वपूर्ण ग्रंथों– 'हिंदू कॉलोनीज इन दा फार ईस्ट' (Hindu Colonies in the Far-East) और 'द स्टडी आफ संस्कृत इन साउथ ईस्ट एशिया' (The study of Sanskrit in South- East Asia)-द्वारा यह सिद्ध किया कि देश में ही नहीं, सुदूर देशों में भी हमारे प्रतापी राजाओं, विद्वानों, व्यापारियों द्वारा भारतीय विचारों ओर संस्थाओं का किया गया प्रचार और प्रसार हिंदू जीवन-दर्शन की श्रेष्ठता और जीवंतता का प्रमाण है।

गुहा को डॉ. मजूमदार की अकाट्य तथ्यों पर आधारित खोजपूर्ण पुस्तकों 'द हिस्ट्री आफ फ्रीडम मूवमेंट इन इंडिया' (The History of Freedom Movement in India) और 'द हिस्ट्री एंड कल्चर ऑफ दा इंडियन पीपल' (The History and culture of the Indian people)' निम्नलिखित तीन प्रस्थापनाओं पर अकारण आपत्ति है–

1. स्वातंत्र्य संग्राम का सरकारी इतिहास यह मानकर चलता है कि भारत की स्वतत्रंता का हरण अट्‌ठारहवीं शताब्दी में हुआ जबकि वास्तविक इतिहास हमें बताता है कि इस तिथि से कम से कम पाँच शताब्दी पूर्व ही भारत के अधिकांश भाग ने अपनी आजादी खो दी थी।

2. सन् 1947 में हुआ भारत का दुखदायी विभाजन मुख्य रूप से उस मुस्लिम अड़ियलपन का परिणाम था जो अपने मजहब को राष्ट्र के ऊपर तरजीह देता था।

3. प्राचीनकाल में भारतीय संस्कृति विकास के चरम पर थी जिसको पहले धर्मांध मुस्लिम आक्रांताओं और बाद में साम्राज्यवादी धूर्त अंग्रेजों ने गहरा आघात पहुँचाया। अतः प्राचीन हिंदू जीवन-मूल्यों और संस्थाओं को पुनः स्थापित करना सद्य-स्वातंत्र्य प्राप्त राष्ट्र के नव-निर्माण के लिए परमावश्यक है, उस स्वातंत्र्य को अक्षुण्ण बनाए रखने की पहली शर्त भी है।

डॉ. मजूमदार की उपर्युक्त प्रस्थापनाओं की काट के लिए गुहा सबसे बड़ा झूठ गढ़ते हैं कि मध्यकालीन भारत में जो बड़े पैमाने पर हिंदुओं का मुसलमानों में धर्मांतरण हुआ वह प्रायः निम्नजातियों द्वारा स्वेच्छा से जाति-प्रथा की अपमानजनक जकड़ से छुटकारा पाने के लिए किया गया था। हरियाणा के विस्तृत मेवात क्षेत्र में उच्च-वर्ण के राजपूतों और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के जाटों, गूजरों

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 34

और त्यागियों के थोक में हुए धर्मांतरण के विषय में गुहा क्या कहेंगे? गुहा जी! मुसलमानों द्वारा हिंदुओं का बलात् धर्मांतरण हमारे इतिहास का बहुत मर्मांतक प्रकरण है, कृपया उसे इतने हल्के से न लें।

आक्रांताओं को शोषित, पीड़ित और प्रताड़ित देशभक्त भारतीयों के समकक्ष सिद्ध करने के लिए गुहा 1940 में रामगढ़ (बिहार) कांग्रेस अधिवेशन में मौलाना अब्दुल कलाम आजाद के अध्यक्षीय भाषण के उस भोथरे तर्क का अकादमिक उपयोग करने का असफल प्रयास करते हैं जिसमें मौलना ने फरमाया कि भारत की ओर आए अनेक कारवाँओं में इसलाम का कारवाँ अंतिम था। ''तब से अब तक 11 शताब्दियाँ

**हमारे देश में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और कम्यूनिस्ट पार्टी की स्थापना 1925 में हुई थी। जहाँ संघ की स्थापना प्रखर राष्ट्रवादी किंतु अत्यंत निर्धन तथा साधनहीन डॉ. हेडगेवार ने पाँच-सात देशभक्त बाल कार्यकर्ताओं को अपने साथ लेकर नागपुर में की, वहीं साम्यवादी दल की स्थापना सोवियत संघ की प्रेरणा, प्रयास और पैसे के बलबूते भारत भूमि पर न होकर ताशकंद में उधर के कुछ मुस्लिम कम्यूनिस्टों द्वारा की गई।**

बीत गई हैं। अतः इस्लाम का भारत भूमि पर उतना ही बड़ा दावा बनता है जितना हिंदुत्व का। जैसे हिंदू गर्व से कह सकता है कि वह भारतीय है और हिंदू धर्म का अनुयायी है, वैसे ही हम (मुसलमान) भी कह सकते हैं कि हम भारतीय हैं और इस्लाम मजहब को मानते हैं। ऐसे ही ईसाई भी यह दावा करने के हकदार हैं कि वे भारतीय हैं और ईसाई मतावलंबी हैं।''

गुहा ही सोच समझकर उत्तर दें कि मौलाना के स्वधर्मियों ने उनके कथन को देश विभाजन की हृदय विदारक करनी से सत्य सिद्ध किया अथवा असत्य। देश के धुर उत्तर पूर्व के नगालैंड, मिजोरम सहित अन्य अनेक जन-जातीय क्षेत्रों में देश को खंडित करने के विष-बीज बोकर चर्च के मिशनरी क्या मौलाना आजाद की सद्भावना का सकारात्मक उत्तर देते रहे हैं? और क्या इस प्रकार के अनर्गल तर्क प्रस्तुत कर गुहा निष्पक्ष इतिहासकार की साख को चार चाँद लगा रहे हैं अथवा काला धब्बा? और क्या तथाकथित ख्यातनामा (कम्यूनिस्ट) इतिहासकार रोमिला थापर, इरफान हबीब आदि उपर्युक्त राष्ट्रवादी इतिहासकारों की खोजपूर्ण प्रस्थापनाओं का सप्रमाण, तर्क संगत तरीके से खंडन कर पाए हैं?

गुहा का आठवाँ असत्य उनके मौन में छिपा है। उन्होंने अपने द्वारा उठाए गए प्रश्न के कारणों की चर्चा ही नहीं की है। बौद्धिक विमर्श में कम्यूनिस्टों के आधिपत्य और परंपरावादियों (राष्ट्रवादियों) की अनुपस्थिति की वजह यदि खोजते तो बहुत ही चौकाने वाले तथ्य उजागर हो जाते। इसकी जिम्मेदारी का ठीकरा संघ की विचारधारा के सिर पर फोड़ने का प्रयत्न कर वे एक बार पुनः पक्षपाती अंपायर के पदचिह्नों पर चल रहे हैं।

इतिहास बताता है कि हमारे देश में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और कम्यूनिस्ट पार्टी की स्थापना दो दिन आगे पीछे सन् 1925 में हुई थी। जहाँ संघ की स्थापना प्रखर राष्ट्रवादी किंतु अत्यंत निर्धन तथा साधनहीन डॉ. केशवराव हेडगेवार ने पाँच-सात देशभक्त बाल कार्यकर्ताओं को अपने साथ लेकर नागपुर में की, वहीं साम्यवादी दल की स्थापना सोवियत संघ की प्रेरणा, प्रयास और पैसे के बलबूते भारत भूमि पर न होकर ताशकंद में उधर के कुछ मुस्लिम कम्यूनिस्टों द्वारा की गई जिसमें शीघ्र ही मानवेंद्र नाथ राय, अंबानी मुखर्जी तथा उनकी पत्नी रोजा, मोहम्मद अली, मोहम्मद शफीक, श्रीपाद अमृत डांगे आदि भी

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 35



शामिल हो गए। केवल मास्को से ही अपार धन, साहित्य समर्थन और दिशानिर्देश नहीं मिले, अपितु इंग्लैंड के धनाढ्य मजदूर संगठनों ने भी भारतीय कम्यूनिस्ट ट्रेड यूनियनों की दिल खोलकर सहायता की। पीपल्स पब्लिशिंग हाउस और अनेक पत्र-पत्रिकाओं में विज्ञापनों की वर्षा द्वारा प्रचार-माध्यमों को खड़ा किया गया। न जाने कितने चिनार-मिनार औद्योगिक घरानों और उनके गुर्गों के माध्यम से कम्यूनिस्ट पार्टी को सब प्रकार के साधन उपलब्ध कराए गए। एक सोवियत लैंड पुरस्कार देकर रातोंरात महान् साहित्यकार और विचारकों को अवतरित कर दिया गया।

दूसरी ओर संघ की शक्ति उसके संकल्पित,

**संघ का प्रारंभ से ही यह प्रयत्न रहा कि उसकी शाखाओं में अधिकाधिक विद्यार्थी एवं अन्य नवयुवक आएँ। इसके लिए उसने अपने समर्पित कार्यकर्ताओं को स्वयं के भरण-पोषण के लिए विद्यालयों में अध्यापक के रूप में कार्य करने के लिए प्रेरित किया, जिससे वे सतत् नवयुवकों व विद्यार्थियों के संपर्क में रहें और अपने व्यवहार तथा विचारों से उनको संघ के निकट ला सकें। ऐसा ही हुआ भी।**

निःस्वार्थ, आदर्शोन्मुख, समर्पित, देशभक्त स्वयंसेवक ही रहे। पहली गुरु-दक्षिणा की राशि मात्र 84 (चौरासी रुपए) रुपए थी। संघ का बिरवा इतना ही नन्हा परंतु गंगाजल की तरह निर्मल रहा है। इन कार्यकर्ताओं में अधिकांश निम्न मध्य-वर्ग से संबंध रखते हैं, जो सरकारी विद्यालयों में पढ़े हैं, अभावों में जिए हैं– स्वयं के लिए नहीं, राष्ट्र के लिए जिए हैं।

संघ का प्रारंभ से ही यह प्रयत्न रहा कि उसकी शाखाओं में अधिकाधिक विद्यार्थी एवं अन्य नवयुवक आएँ। इसके लिए उसने अपने समर्पित कार्यकर्ताओं को स्वयं के भरण पोषण के लिए विद्यालयों में अध्यापक के रूप में कार्य करने के लिए प्रेरित किया, जिससे वे सतत् नवयुवकों व विद्यार्थियों के संपर्क में रहें और अपने व्यवहार तथा विचारों से उनको संघ के निकट ला सकें। ऐसा ही हुआ भी। सब प्रकार की बौद्धिक क्षमताओं और कोई भी पद पाने की क्षमताओं के बावजूद भी दीनदयाल उपाध्याय, तृतीय सरसंघचालक बाला साहेब देवरस, सुंदर सिंह भंडारी, कल्याण सिंह, शांता कुमार, मदनलाल खुराना सहित सहस्रों स्वयंसेवकों ने बाकायदा अध्यापन का प्रशिक्षण प्राप्त किया। अध्यापक की नौकरी भी की और शेष समय संघ शाखाओं का जाल बिछाने में लगाया। आज का संघ का यह वटवृक्ष उसी रीति-नीति का परिणाम है। इसी के साथ संघ ने सदैव हिंदी सहित भारतीय भाषाओं को प्राथमिकता दी। अंग्रेजी और अंग्रेजियत से उसे कभी मोह नहीं रहा। प्रचार से कोसों दूर रहा।

इसके भी दो कारण थे–प्रथम तो यह कि संघ शक्ति का संचय करना चाहता था, जिससे अवसर मिलने पर यदि आवश्यकता पड़े तो शक्ति के बल पर भी अंग्रेजों की दासता से देश को मुक्त करा सके। दूसरे संघ नहीं चाहता था कि उसके स्वयंसेवक प्रसिद्धि कामना से ग्रसित हो अपने लक्ष्य से भटक जाएँ।

इसके विपरीत, कम्यूनिस्ट नेतृत्व भद्रलोक से आया था। संभ्रांत और संपन्न परिवारों के साहेबजादे महंगे पब्लिक स्कूलों में पढ़ते थे, जहाँ अंग्रेजी और अंग्रेजियत का अखंड साम्राज्य होता है। इनकी उच्च शिक्षा विदेशों में हुई। फर्राटेदार अंग्रेजी में बोलना और लिखना इनके लिए अत्यंत सहज कर्म रहा। प्रचार-माध्यमों को इन्होंने अपने विचारों और कर्म के लिए सदा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंग माना। सत्तासीन कांग्रेस की चिरौरी कर विभिन्न केंद्रीय संस्थानों, विश्वविद्यालयों, समाचार माध्यमों पर काबिज हो गए। सत्ताधीशों की इन पर हमेशा कृपा रही।

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 36

दूसरी ओर संघ पर सरकार की सदैव कुदृष्टि रहती आयी है। स्वतंत्रता के बाद संघ ने तीन-तीन प्रतिबंध झेले हैं, यह तथ्य हमारे कथन का सबसे बड़ा प्रमाण है।

इन्हीं सब कारणों से राष्ट्रवादी ताकतें प्रचार के क्षेत्र में पिछड़ गई हैं और कम्यूनिस्ट बाजी मारते दिखाई देते हैं। इससे संघ की सबसे बड़ी हानि यह हुई है कि निराधार आरोपों के गहनतम श्याम रंग के अंजन से संघ-प्रतिमा पर कालिख पोतने का षड्यंत्र चलता रहा है, आज भी चल रहा है। इस दुष्प्रचार के बाद भी भारत का मुख्य स्वर राष्ट्रवाद है, न कि आधा-अधूरा परकीय साम्यवादी दर्शन जो अपनी आखरी साँसें ले रहा है और भारत का राष्ट्रवादी सांस्कृतिक दर्शन विश्व के महानतम तथा सबलतम संगठन-संघ के माध्यम से सूर्य की भाँति दमक रहा है।

**गुहा इन राष्ट्रद्रोहियों की उन करतूतों को भी अनदेखा करते हैं कि कैसे जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के तीस-पैंतीस वर्षीय मुस्टंडों को पहले सरकारी खर्चे-पानी पर पाला-पोसा जाता है, 'भारत तेरे टुकड़े होंगे, इंशा अल्लाह - इंशा अल्लाह' के देश विरोधी गीत गवाए जाते हैं और फिर उठाकर रातों-रात नैनीताल लिटरेरी फैस्टिवल के मंच पर 'महान् बुद्धिजीवी' घोषित कर स्थापित कर दिया जाता है!**

एक बात और। कभी न कभी, निष्पक्ष बुद्धिजीवी भी उन कम्यूनिस्ट दादागिरी और तालिबानी हरकतों से रूबरू होते रहे हैं जिनका प्रदर्शन इन कम्यूनिस्टों का प्रिय शगल है और जिसका शिकार इनसे भिन्न विचार रखने वाले बड़े से बड़े विद्वान अक्सर होते रहते हैं।

बांग्लादेशी लेखिका तस्लीमा नसरीन के साथ किए गए घोर अक्षम्य और अभद्र व्यवहार की गुहा चर्चा तक नहीं करते। उस वीर विदुषी का दोष मात्र इतना ही है न कि उसने अपने उपन्यास 'लज्जा' में बांग्लादेशी हिंदुओं पर वहाँ के कट्टरपंथी मुसलमानों द्वारा ढाये जा रहे अत्याचारों का खुलासा किया है।

गुहा इन राष्ट्रद्रोहियों की उन करतूतों को भी अनदेखा करते हैं कि कैसे जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के तीस-पैंतीस वर्षीय मुस्टंडों को पहले सरकारी खर्चे-पानी पर पाला-पोसा जाता है, 'भारत तेरे टुकड़े होंगे, इंशा अल्लाह - इंशा अल्लाह' के देश विरोधी गीत गवाए जाते हैं और फिर उठाकर रातों-रात नैनीताल लिटरेरी फैस्टिवल के मंच पर 'महान् बुद्धिजीवी' घोषित कर स्थापित कर दिया जाता है!

इसी के साथ गुहा इस सत्य को भी जानते होंगे कि बौद्धिक सेमीनारों और सरकारी पैसे से चलने वाले संस्थानों पर नेहरूवंशियों की कृपा से काबिज इन कम्यूनिस्टों को भारत की राष्ट्रवादी जनता ने पूरी तरह खारिज कर दिया है।

अब मैं गुहा के नौवें और सर्वाधिक मुखर उस असत्य की ओर आता हूँ जिसका आश्रय उन्होंने भारत की एकात्म-राष्ट्र की कालातीत अवधारणा को खंडित करने और नकारने के उद्देश्य से दोहरे मापदंड अपनाकर लिया है। जो बात उन्हें पश्चिमी देशों के संदर्भ में स्वीकार्य है, उसी को गुहा भारत के लिए वर्जनीय मानते हैं। उनको राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वर्तमान सरसंघचालक मोहनराव भागवत के इस अकाट्य सत्य से ही चिढ़ नहीं है कि यहाँ के मुसलमानों, ईसाइयों आदि के पुरखे हिंदू थे, अपितु प्रतिष्ठित इतिहासकार डॉ. राधाकुमद मुखर्जी द्वारा सन् 1914 में लंदन में प्रकाशित खोजपूर्ण आलेख 'फंडामेंटल यूनिटी ऑफ इंडिया (Fundamental Unity of India) अर्थात् भारत की मूलभूत एकता' में प्रमाणित इस निर्दोष कथन पर भी है कि 'भारतीय

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 37



राष्ट्रीय चेतना क्रूर आक्रमणकारी मुसलमानों और धूर्त अंग्रेजों के आगमन से सहस्रों वर्ष पूर्व से विद्यमान थी। हमारे प्राचीन ऋषियों, मुनियों ने भारतवर्ष नाम संपूर्ण भारत देश को ध्यान में रखकर कर दिया था। प्रथम जैन तीर्थंकर आदिनाथ (ऋषभदेव जी) भगवान के प्रतापी सुपुत्र भरत (दुष्यंत-शकुंतला के वीर सुपुत्र भरत से भी शताब्दियों पूर्व) एक ऐतिहासिक महापुरुष थे जिनका भारत के संदर्भ में उतना ही महत्त्व है जितना रोम में रोमुलस का।

उनसे भी पूर्व ऋग्वेद की ऋचाओं में देश के सुदूर आंचलों में प्रवहमान पवित्र नदियों का वर्णन भारतीय जन मानस में भारत राष्ट्र की एकात्म चेतना का प्रमाण

**भारतीय राष्ट्रीय चेतना क्रूर आक्रमणकारी मुसलमानों और धूर्त अंग्रेजों के आगमन से सहस्रों वर्ष पूर्व से विद्यमान थी। हमारे प्राचीन ऋषियों, मुनियों ने भारतवर्ष नाम संपूर्ण भारत देश को ध्यान में रखकर दिया था। प्रथम जैन तीर्थंकर आदिनाथ (ऋषभदेव जी) भगवान के प्रतापी सुपुत्र भरत (दुष्यंत-शकुंतला के वीर सुपुत्र भरत से भी शताब्दियों पूर्व) एक ऐतिहासिक महापुरुष थे।**

**- डॉ. राधा कुमुद मुखर्जी**

है। मातृभूमि के प्रति यह अगाध प्रेम संपूर्ण संस्कृत-वांग्मय के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है। विष्णुसहस्रनाम और आठवीं सदी में आदि शंकराचार्य द्वारा देश के चारों कोनों में अर्थात् उत्तर में बद्री-केदारनाथ, दक्षिण में रामेश्वरम्, पश्चिम में द्वारिका और पूर्व में जगन्नाथपुरी तीर्थों की स्थापना के द्वारा उस राष्ट्रीय चेतना को और भी सबल स्वर मिला था जिसकी वजह से इस जन-मानस का निर्माण हुआ कि भारत कुछ भौगोलिक खंडों के जोड़ का नाम नहीं, अपितु एक ऐसी जीवंत संज्ञा है जिसमें एक छोर से दूसरे छोर तक एकात्मता का अविरल और निर्मल ज्वार ठाठे मारता है। अज्ञात अतीत से चली आ रही तीर्थ यात्राओं की अबाध परंपरा ने क्षुद्र क्षेत्रीय महत्त्वाकांक्षाओं के उफान के लिए कोई अवसर ही नहीं छोड़ा जिससे भारत की एकता को खतरा होता।

डॉ. मुखर्जी ने यह भी प्रस्थापित किया कि धर्म के साथ-साथ राजनीति ने भी भारत की भौगोलिक एकता के प्रति जनमानस में चेतना जाग्रत की। चंद्रगुप्त मौर्य, समुद्रगुप्त, हर्षवर्धन आदि सम्राटों का इस संबंध में विशेष योगदान रहा। जावा, सुमात्रा, बाली, श्याम, कंबोडिया आदि सुदूर दक्षिण-पूर्व एशियायी देशों में भारतीय भारतीय संस्कृति का प्रसार इस एकात्मता के अकाट्य प्रमाण हैं।

गुहा को सबसे बड़ी चिढ़ इस बात से है कि डॉ. मुखर्जी 'हिंदू' और 'भारत' शब्दों का पर्यायवाची के अर्थ में प्रयोग करते हैं। राष्ट्रवाद पर मर्मांतक चोट करने के उद्देश्य से गुहा वैचारिक विषवमन करते हैं। वे डॉ. मुखर्जी पर आरोप लगाते हैं कि वे अपनी स्थापनाओं में मुसलमानों, ईसाइयों की चर्चा तो करते ही नहीं है, विभिन्न जनजातियों, जातियों, कबीलों की भी उपेक्षा करते हैं जो गैर-हिंदू भारतीय सामाजिक परिदृश्य का विशिष्ट अंग है। क्या गुहा यह कहना चाहते हैं कि विभिन्न जातियाँ हिंदू नहीं हैं, ईसाई और इस्लाम के जन्म से पूर्व के इतिहास में भी इन दोनों मजहबों का उल्लेख होना चाहिए। गुहा हमारे ज्ञान-चक्षु खोलने की कृपा करने के लिए डॉ. मुखर्जी पर आरोप लगाते हैं कि वे संस्कृत भाषा को भारतीय एकसूत्रता के सबल समवाय के रूप में प्रस्तुत करते हैं जबकि सच्चाई यह है कि संस्कृत भाषा केवल कुछ संभ्रांत पंडितों तक सीमित थी। विशाल सामान्य समाज तो संस्कृत भाषा से अनभिज्ञ था।

परंतु गुहा महाशय! आपके प्रेरणा पुरुष तो वेदों तक

को गडरियों के गीत बताते हैं। सोच समझ कर उत्तर दीजिए कि दोनों में से कौन-सा कथन सच है। वैसे सच यह है कि दोनों ही सफेद झूठ हैं क्योंकि जातक कथाओं के रचयिता बौद्ध भिक्षु और पंचतंत्र के विष्णुशर्मा नितांत निर्धन गृह त्यागी थे जिनकी लिखित कहानियों की जूठन ग्रीस, रोम और मिस्र के गल्प साहित्य में किसी न किसी रूप में बिखरी पड़ी है। अंग्रेजी भाषा के आदि कवि ज्याफ्री चौसर और शेक्सपीयर से लेकर नोबेल पुरस्कार विजेता टी.एस. इलियट तक किसी न किसी रूप में इसी संस्कृत भाषा के ऋणी हैं। गुहा जी! तत्कालीन भारत में तो जन-सामान्य ही नहीं, पशु-पक्षी, वृक्ष, लतायें, पर्वत शृंखलाएँ, नदी और झरने तक भी संस्कृत

**अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजियत पर आसक्त गुहा को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा प्रस्तुत भारत राष्ट्र की अवधारणा में संकीर्णता और साम्प्रदायिकता की दुर्गंध आती है परंतु जब वही बात हार्वर्ड विश्वविद्यालय में 50 वर्ष तक अध्यापन करने वाले प्रसिद्ध राजनीतिशास्त्री सेमुअल हटिंगटन तथा बहुमुखी प्रतिभा के धनी इंगलैंड के प्रतिष्ठित दार्शनिक रोजर स्करूटन अपने-अपने देशों के विषय में कहते हैं तो गुहा का मुख कमल खिल उठता है।**

बोलते, समझते थे। क्या आशा कर सकते हैं कि आप इस श्लेषालंकार (Pun) का दुष्प्रचार के लिए तोड़मरोड़ कर उसी प्रकार से दुरूपयेाग नहीं करेंगे जैसा आपने प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी की गणेश संबंधी प्रतीकात्मक टिप्पणी का किया है। कृपया मिथक कहकर अंतर्निहित सत्य से मुँह नहीं मोड़िए।

गुहा को महान् समाजशास्त्री जी.एस. घुर्ये भी इसी कारण नामपसंद हैं क्योंकि उन्होंने अकाट्य प्रमाणों के द्वारा भारतीय सभ्यता और संस्कृति की महानता, एकता तथा प्राचीनता को, जिसके केंद्र में हिंदुत्व है, प्रस्थापित किया है। पता नहीं किस कारण गुहा ने वेरियर ऐलविन की जीवनी लिख कर उसे महिमामंडित कर दिया जो डॉ. घुर्ये की दृष्टि में मध्य भारत सहित उत्तर पूर्व की जन जातियों को गैर हिंदू सिद्ध कर भारत को खंडित करने के षड्यंत्र रचने में संलग्न था। सन् 1943 में प्रकाशित डॉ. घुर्ये की खोजपूर्ण पुस्तक 'दा अबोरिजिंस-सो कॉल्ड-एण्ड देअर फ्यूचर्स (The Aborigins-so called- and Their future ) अर्थात् तथाकथित आदिवासी और उनका भविष्य' में वर्णित तथ्यों का आज तक भी तर्कपूर्ण खंडन नहीं हो पाया है।

विद्वत्जन की अनुमति से अब मैं डॉ. गुहा के झूठ रूपी झाड-झंकाड़ में अंतिम आहुति देने के उद्देश्य से उनके दोहरे मापदंड की थोड़ा विस्तार से चर्चा करने की अनुमति चाहता हूँ।

अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजियत पर आसक्त गुहा को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा प्रस्तुत भारत राष्ट्र की अवधारणा में संकीर्णता और सांप्रदायिकता की दुर्गंध आती है परंतु जब वही बात हार्वर्ड विश्वविद्यालय में 50 वर्ष तक अध्यापन करने वाले प्रसिद्ध राजनीतिशास्त्री सेमुअल हटिंगटन तथा बहुमुखी प्रतिभा के धनी इंगलैंड के प्रतिष्ठित दार्शनिक रोजर स्करूटन अपने-अपने देशों के विषय में कहते हैं तो गुहा का मुख कमल खिल उठता है।

हटिंगटन की बहुचर्चित पुस्तक 'दॉ क्लैश ऑफ सिविलाइजेशंस' (The Clash of Civilizations) अर्थात् सभ्यताओं का संघर्ष' की शायद इसीलिए चर्चा नहीं करते क्योंकि हंटिंगटन की यह उक्ति काफी हद तक सत्य सिद्ध होती दिख रही है कि भविष्य में युद्ध राष्ट्रों के बीच नहीं लड़े जाएंगे, अपितु संस्कृतियों के बीच लड़े जाएंगे और मुसलिम आतंकवाद सबसे खतरनाक चुनौती बनकर उभरेगा। गुहा ने 2004 में प्रकाशित हटिंगटन लिखित पुस्तक 'हू आर वी' (Who

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 39



are we ) अर्थात् हम ( अमेरिकन ) कौन हैं' की चर्चा अवश्य की है। इसमें हंटिंगटन ने ईसाई मजहब, प्रोटेस्टैंट जीवन-मूल्य और नैतिकता, कार्यशैली, अंग्रेजी भाषा, विधि और न्याय की अंग्रेजी परंपरा एवं सरकारी हस्तक्षेप की सीमाएँ तथा यूरोपीयन कला, साहित्य, दर्शन और संगीत को अमेरिकी धर्म की संज्ञा दी है, जिसने युद्ध और शांति दोनों में अमेरिकन राष्ट्र की अखंडता अक्षुण्ण रखी है और उसके नागरिकों को एक साझी पहचान एवं लक्ष्य प्रदान किया है। अमेरिका के गैर गोरे एंगलो-सैक्सन अमेरिकन भी उसकी इस ऐंग्लो-प्रोटेस्टेंट संस्कृति और राजनीतिक मूल्यों को अंगीकार कर ही अमेरिकन बने हैं। मजे की बात है कि गुहा यहाँ भी

**एक भूखंड विशेष में साझे इतिहास के वारिस जन ही आसानी से एक सहकरी समाज जनित संस्कृति का निर्माण कर सकते हैं। जहाँ भी व्यक्तियों की पहचान राष्ट्रीय सीमाओं का उल्लंघन कर मजहब आदि के नाम पर करने का प्रयत्न किया जाएगा, वहीं प्रजातंत्र संकटग्रस्त होगा। - रोजर स्क्रूटन**

हंटिंगटन की स्थापनाओं के विरोध में एक शब्द भी न बोलकर संघ को ही कोसते हैं।

प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित ब्रिटिश दार्शनिक रोजर स्क्रूटन लिखित और 2014 में प्रकाशित ग्रंथ 'हाउ टु बी ए कंजरवेटिव' ( How to be a Conservative ) अर्थात् दक्षिणपंथी कैसे बनें', में अभिव्यक्त विचारों का सामना करने में गुहा महाशय बुरी तरह असफल रहे हैं। बगले झाँकने पर मजबूर हैं और बौद्धिक कुश्ती जीतने के लिए कुतर्कों का सहारा लेते पकड़े जाते हैं। स्क्रूटन वैश्विक नागरिकता की कल्पना को जड़ से नकारते हैं और विभिन्न देशों के राष्ट्र-राज्य स्वरूप के हिमायती बनकर निर्भ्रांत शब्दों में घोषणा करते हैं कि एक भूखंड विशेष में साझे इतिहास के वारिस जन ही आसानी से एक सहकरी समाज जनित संस्कृति का निर्माण कर सकते हैं। जहाँ भी व्यक्तियों की पहचान राष्ट्रीय सीमाओं का उल्लंघन कर मजहब आदि के नाम पर करने का प्रयत्न किया जाएगा, वहीं प्रजातंत्र संकटग्रस्त होगा। बेलाग शब्दों में स्क्रूटन की प्रस्थापना है कि राष्ट्रवाद की आधारशिला एक ऐसा उत्तम-पुरुष बहुसांख्य ( First person Plural ) अर्थात् एक देश, एक समाज और एक जीवन शैली है जो सब हमारे अपने हैं। मजहब के प्रति आज्ञाकारी होना नागरिकता की पहली शर्त नहीं है और किसी भी संकट की स्थिति में मजहब के प्रति जवाबदेही के स्थान पर राष्ट्र के नागरिक के रूप में हमारी जवाबदेही प्रमुख होनी चाहिए। जब तक लोग स्वदेश, उसकी सीमाओं और उसकी सांस्कृतिक विरासत के साथ परिवार की तरह एकनिष्ठ नहीं होते, तब तक जनतंत्रात्मक कार्यप्रणाली के लिए अपरिहार्य सहमति की राजनीति मृगतृष्णा ही बनी रहेगी।

राष्ट्रवाद पर हटिंगटन और स्क्रूटन की उपर्युक्त दो-टूक उक्तियों के विरोध में कहने के लिए गुहा जैसों के पास एक शब्द भी नहीं है। जब वही बात संघ कहता है तो ये लोग बिदक जाते हैं।

खैर! अब मैं स्वयं अपने द्वारा संपादित श्री गुरुजी गोलवलकर केंद्रित पुस्तक 'नमन माधव' से भारतीय हिंदू राष्ट्र संबंधी उस अवधारणा को उद्‌भूत करने की अनुमति चाहता हूँ जिसे संघ अपनी स्थापना ( सन् 1925 ) से ही घोषित करता आया है और जिसे गुरुजी आजीवन व्याख्यायित करते रहे हैं। विद्वान पाठकवृंद और डॉ. रामचंद्र गुहा कृपाकर गुरुजी के निम्नलिखित उद्धरण की तुलना हटिंगटन तथा स्क्रूटन के विचारों और निष्कर्षों से कर यह बताने का कष्ट करें कि दोनों में तिलमात्र भी शब्दांतर अथवा अर्थांतर है क्या। भाव-भेद भी हो तो बताएँ। यदि कोई अंतर नहीं है तो गुहा

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 40

**हमारा महान् देश उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में महासागर तक तथा उत्तर-पूर्व ओर पश्चिम में फैली हुई हिमालय की शाखाओं एवं उनके अंतर्गत भू-प्रदेशों से युक्त तथा अपने दक्षिण में हिंद-महासागर स्थित द्वीप समूहों के साथ एक महान् नैसर्गिक इकाई है। हमारा सुविकसित समाज यहाँ इस भूमि की संतान के रूप में सहस्रों वर्षों से निवास कर रहा है। यह समाज विशेषतया आधुनिक काल में हिंदू समाज के नाम से जाना गया है क्योंकि वे हिंदू समाज के ही पूर्वज थे, जिन्होंने मातृभूमि के लिए प्रेम तथा भक्ति के आदर्श एवं परंपरा निश्चित की। वे ही थे जिन्होंने इस मातृ भू की अखंडता एवं पावित्र्य की रक्षा के लिए अपने रक्त को बहाया। इस तथ्य का साक्षी हमारा सहस्रों वर्षों का इतिहास है।**

सत्य और केवल सत्य को समर्पित सच्चे शोधार्थी के रूप में इस तथ्य को स्वीकार करें। क्या करेंगे? पता नहीं।

श्री गुरुजी कहते हैं कि 'किसी राष्ट्र के लिए प्रथम अपरिहार्य वस्तु एक भूखंड है, जो यथा संभव किन्ही प्राकृतिक सीमाओं से आबद्ध हो तथा एक राष्ट्र के रहने और वृद्धि एवं समृद्धि के लिए आधार रूप में काम दे। द्वितीय आवश्यकता है उस विशिष्ट भू-प्रदेश में रहने वाला समाज की जो उसके प्रति मातृभूमि के रूप में पूज्य भाव विकसित करता है तथा अपने पोषण, सुरक्षा और समृद्धि के स्थान के रूप में उसे ग्रहण करता है। संक्षेप में, वह समाज उस भूमि के पुत्र-रूप में स्वयं को अनुभव करे।'

वह समाज केवल मनुष्यों का एक समुच्चय ही नहीं होना चाहिए। विजातीय व्यक्तियों का किसी स्थान पर एकत्रीकरण मात्र नहीं चाहिए, उनके जीवन की एक विशिष्ट पद्धति बनी होनी चाहिए, जिसको जीवन के आदर्श, संस्कृति, अनुभूतियों, भावनाओं, विश्वास एवं परंपराओं के सम्मिलन के द्वारा एक स्वरूप दिया गया हो। इस प्रकार जब समाज समान परम्पराओं एवं महत्त्वाकांक्षाओं से युक्त, अतीत के जीवन की सुख-दुःख की समान स्मृतियों और शत्रु-मित्र की समान अनुभूतियों वाला तथा जिनके सभी हित संग्रहित होकर एकरूप हो गए हैं, एक सुव्यवस्थित रूप में संगठित हो जाता है, तब इस प्रकार के लोग उस विशिष्ट प्रदेश में पुत्र के रूप में निवास करते हुए एक राष्ट्र कहे जाते हैं।

यदि हम अपने देश पर संसार के सभी विद्वानों द्वारा मानी हुई यह परिभाषा लागू करें तो हम देखेंगे कि हमारा महान् देश उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में महासागर तक तथा उत्तर-पूर्व ओर पश्चिम में फैली हुई हिमालय की शाखाओं एवं उनके अंतर्गत भू-प्रदेशों से युक्त तथा अपने दक्षिण में हिंद-महासागर स्थित द्वीप समूहों के साथ एक महान् नैसर्गिक इकाई है। हमारा सुविकसित समाज यहाँ इस भूमि की संतान के रूप में सहस्रों वर्षों से निवास कर रहा है। यह समाज विशेषतया आधुनिक काल में हिंदू समाज के नाम से जाना गया है क्योंकि वे हिंदू समाज के ही पूर्वज थे, जिन्होंने मातृभूमि के लिए प्रेम तथा भक्ति के आदर्श एवं परंपरा निश्चित की। वे ही थे जिन्होंने इस मातृ भू की अखंडता एवं पावित्र्य की रक्षा के लिए अपने रक्त को बहाया। इस तथ्य का साक्षी हमारा सहस्रों वर्षों का इतिहास है।

मातृभूमि की इस संयुक्त उपासना ने हमारे संपूर्ण समाज में कश्मीर से कन्याकुमारी तक, एक वनवासी से नगरवासी तक, एक दूसरे के प्रति एक रक्त संबंध स्थापित किया। ये सभी जातियाँ, ईश्वर की उपासना के विविध मार्ग तथा विविध भाषाएँ एक महान्

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 41



सजातीय ठोस हिंदू समाज की अभिव्यक्तियाँ हैं, जो इस मातृभूमि की संतान हैं।

जब हम कहते हैं कि यह 'हिंदू राष्ट्र' है, तब कुछ लोग तुरंत प्रश्न करते हैं कि जो मुसलमान और ईसाई यहाँ रहते हैं उनके विषय में आप क्या कहते हैं। क्या वे भी यहाँ उत्पन्न नहीं हुए तथा यहीं उनका लालन-पालन नहीं हुआ। वे धर्म के परिवर्तन से ही परकीय कैसे हो गए। किंतु निर्णायक बात तो यह है कि क्या उन्हें यह स्मरण है कि वे इस भूमि की संतान हैं। यह अनुभूति एवं स्मृति उन्हें पोषित करनी चाहिए। केवल हमारे ही स्मरण रखने से क्या लाभ? हम इतने क्षुद्र नहीं कि यह कहने लगें कि केवल पूजा का प्रकार बदल जाने से कोई व्यक्ति उस भूमि का पुत्र नहीं रहता। हमें ईश्वर को किसी भी नाम से पुकारने में आपत्ति नहीं है। हम संघ के लोग पूर्णरूपेण हिंदू हैं। इसलिए हम में प्रत्येक पंथ और सभी धार्मिक विश्वासों के प्रति सम्मान का भाव है। जो अन्य पंथों के प्रति असहिष्णु है, वह कभी भी हिंदू नहीं हो सकता।

इस तर्कबद्ध एवं भावात्मक दृष्टिकोण के होते हुए भी कुछ लोगों का अनुमान है कि हिंदू राष्ट्र की कल्पना मुसलमान तथा ईसाई नागरिकों के अस्तित्व के लिए चुनौती है, वे निकाल बाहर किए जाएंगे तथा उनका उन्मूलन हो जाएगा। हमारी राष्ट्रीय भावना के लिए इससे अधिक मूर्खतापूर्ण अथवा घातक और कुछ नहीं हो सकता। यह तो हमारे महान् एवं सर्वस्पर्शी सांस्कृतिक दाय का अपमान है।

**लेखक प्रसिद्ध चिंतक और लेखक हैं।**

**राष्ट्र के स्वरुप का परंपरागत सच्चा साक्षात्कार होने से राष्ट्रीय जीवनोद्देश्य का ज्ञान होता है और राष्ट्र-जीवन चैतन्य से भर जाता है।**

**- दीनदयाल उपाध्याय**

## संदर्भ


1. Complete works of Swami Vivekanand, advait Asharam, Kolkata
2. A Secular Agenda - Arun Shourie, ASA Publications, New Delhi.
3. Veer Savarkar - Dhananjay Keer, Popular Prakashan,
4. Shri Guru Ji and his RSS -Aanand Aadeesh , MD Publications, Ansari Road, New Delhi.
5. Integral Humanism, Deen Dayal Upadhaya, Lok Hit Prakashan, Lucknow.
6. Religious Demography of India- Joshi, Sriniwas and Bajaj, Centre for Policies Studies, Chennai
7. मार्क्सवाद और समाजवाद- डॉ राम मनोहर लोहिया
8. Guilty man of India's partitions- Dr. Ram Manohar Lohiya
9. श्री गुरुजी समग्र- सुरुचि प्रकाशन, नई दिल्ली
10. नमन माधव - आनन्द आदीश, वितरक- प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली.
11. समाजवाद- डॉ संपूर्णानंद
12. Story of RSS - K.R. Malkani
13. भारत की मौलिक एकता- डॉ वासुदेव शरण अग्रवाल, लीडर प्रेस, इलाहाबाद
14. The History and culture of the Indian People- Dr. R.C. Majumdar,
15. Fundamental Unity of India- Dr. Radha Kumud Mukherjee
16. The Aborigins - so called- and their future- Dr. G. S. Ghurye
17. Who are we - Huttington
18. How to be a conservative - Rogar Scruton
19. Patriots and partisans - Ramachandra Guha

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 42

भारत की राजभाषा हिंदी जहाँ देश में सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा है वहीं वैश्विक स्तर पर अंग्रेजी व चीनी के बाद सर्वाधिक बोली जाती है। विश्व की तीसरी सशक्त भाषा होने के बावजूद राजभाषा हिंदी को देश में अपना यथोचित स्थान प्राप्त करने के लिए कई बाधाओं का सामना करना पड़ रहा है। यद्यपि सरकार इसके प्रोत्साहन के लिए विशेष प्रयास करती है फिर भी इसके मार्ग में नित नई-नई बाधाएँ खड़ी की जाती हैं। प्रस्तुत लेख में हिंदी की वर्तमान स्थिति और इसकी भावी दिशा का लेखा-जोखा प्रस्तुत कर रहे हैं प्रतिष्ठित रसायन वैज्ञानिक व केंद्रीय हिंदी समिति के पूर्व सदस्य डॉ. ओम प्रभात अग्रवाल --

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 43

# हिंदी का वर्तमान और भावी दिशा

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् हिंदी ने अनेक, अनछुए आयामों में प्रगति की और बाधाओं के अनेक पर्वत शिखरों को लाँघा, यद्यपि वर्तमान परिदृश्य अत्यंत विरोधाभासी संकेतकों से परिपूर्ण है। एक ओर तो उसके लिए केंद्र से आज की सरकार द्वारा संरक्षण बढ़ता प्रतीत हो रहा है, विज्ञापनों में वह प्रतिष्ठित होती जा रही है, हिंदी समाचारपत्रों एवं पत्रिकाओं की पाठक संख्या ऊँची छलाँग लगा रही है, वहीं नौकरशाही में अंग्रेजी अभी भी प्रियपात्र बनी हुई है तथा नगरों एवं कस्बों में अंग्रेजी माध्यम से बच्चों को शिक्षा दिलवाने की होड़ लगी हुई है। कभी-कभी तो लगता है कि आजादी के बाद हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं के उत्थान का जो सपना देखा गया था, वह अब दस्तावेजों, कार्यक्रमों तथा कुछ सरकारी समितियों में दब कर रह गया है। परंतु पहले सकारात्मक बातें।

भारतीय प्रशासनिक सेवा, रक्षा मंत्रालय व न्यायपालिका आदि की परीक्षाओं में हिंदी का विकल्प है और लगभग 35 प्रतिशत परीक्षार्थी हिंदी विकल्प चुनते हैं। वर्ष 2017 से नीट-अंडरग्रेजुएट परीक्षा में भी यह विकल्प उपलब्ध है। वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग ने लगभग साढ़े सात लाख नए शब्द इन दोनों क्षेत्रों के लिए गढ़े हैं, जिनमें से बीस हजार सूचना प्रौद्योगिकी से संबंधित हैं। यही नहीं, अब वह एक व्युत्पत्ति कोष के निर्माण में जुटा हुआ है जिसमें इलेक्ट्रॉनिक से संबंधित एक लाख शब्द स्थान पा सकेंगे। वस्तुतः नए जमाने की आवश्यकता के अनुरूप हिंदी में नए शब्दों के निर्माण की प्रक्रिया गैर सरकारी क्षेत्रों में भी निरंतर चल रही है। उदाहरणस्वरूप ऐसे कुछ शब्द हैं– ब्लागिया (Blogger), अंतरताना (Internet), उड़न खटोला (हेलीकॉप्टर), कबूतरबाजी (Human traffick-

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 44

ing) आदि। स्मरणीय है कि कुछ वर्ष पहले निर्मित शब्द सांसद, पर्यावरण आदि तो अब धड़ल्ले से प्रयुक्त हो रहे हैं। अनेक विज्ञान शोध जर्नल, जैसे– विज्ञान परिषद अनुसंधान पत्रिका (विज्ञान परिषद, प्रयाग) तथा वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद् पत्रिका (सी.एस.आइ.आर., दिल्ली) आदि हिंदी में हैं। अनेक लोकरुचि विज्ञान पत्रिकाएँ जैसे विज्ञान, आविष्कार, साइंस इंडिया, विज्ञान गरिमा, विज्ञान गंगा आदि भी हिंदी पाठकों का ज्ञानवर्धन कर रही हैं। भोपाल के अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय में इंजीनियरिंग की विभिन्न शाखाओं में प्रशिक्षण हिंदी माध्यम से प्रदान किया जा रहा है। महात्मा गांधी हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा भी उच्चतम स्तर की शिक्षा हिंदी माध्यम से दे रहा है। संविधान के अनुच्छेद 348 के खंड एक के भाग 'ख' में अंग्रेजी को उच्च न्यायपालिका के लिए आवश्यक माना गया है, परंतु केंद्रीय गृह मंत्रालय और कानून मंत्रालय मिल कर हिंदी अथवा किसी अन्य भारतीय भाषा में काम करने की अनुमति दे सकते हैं। इसी के तहत राजस्थान, उत्तर प्रदेश, बिहार एवं मध्य प्रदेश के उच्च न्यायालयों को यह सुविधा प्राप्त है।

मीडिया में हिंदी छाई हुई है। एक अनुमान के अनुसार भारत के सत्तर प्रतिशत समाचारपत्रों की भाषा हिंदी है और पाठक संख्या की दृष्टि से शीर्ष स्थानों पर हिंदी अखबारों का ही कब्जा है। इंडियन रीडरशिप सर्वे – 2014 के अनुसार (अभी तक यह अंतिम रपट है) पाठक संख्या की दृष्टि से प्रथम तीन स्थान पर हिंदी समाचारपत्र, 'दैनिक जागरण' (1.66 करोड़), 'हिंदुस्तान' (1.47 करोड़), एवं 'दैनिक भास्कर' (1.38 करोड़) हैं, जबकि चौथे स्थान पर मलयालम पत्र 'मनोरमा' है (88 लाख)। अंग्रेजी के किसी अखबार को केवल पांचवाँ स्थान (टाइम्स ऑफ इंडिया, 76 लाख) प्राप्त हो सका है। वस्तुतः सर्वे के अनुसार अंग्रेजी पत्रों का वर्चस्व निरंतर ढलान पर है।

इंटरनेट की दुनिया में हिंदी ने अच्छी पैंठ बनाई है। अनेक प्रतिष्ठित बैंकों, कतिपय नामी-गिरामी व्यापारिक कंपनियों, पूंजी बाजार नियामक सेबी, बीएसई, एनएसई, भारतीय जीवन बीमा निगम, रिजर्व बैंक तथा इसरो जैसे अनेक वैज्ञानिक प्रतिष्ठानों की वेबसाइटें हिंदी में हैं। आज हिंदी के पंद्रह से अधिक सर्च इंजन हैं जो कि कुछ ही क्षणों में किसी भी अंग्रेजी वेबसाइट का हिंदी अनुवाद प्रस्तुत कर देते हैं।

याहू, गूगल एवं फेसबुक हिंदी में उपलब्ध हैं। फेसबुक पर अब तक 12 करोड़ से अधिक हिंदीवाले जुड़ चुके हैं। विकीपीडिया पर एक लाख से भी अधिक लेख हिंदी में सुलभ हैं। हिंदी में ब्लॉगों की बाढ़ आ गई है, जिनमें दस हजार तो अति सक्रिय श्रेणी में आते हैं। एक सर्वेक्षण के अनुसार 42 प्रतिशत भारतीय हिंदी में इंटरनेट देखते हैं। गूगल कंपनी के भारत प्रभाग के अध्यक्ष श्री राजन आनंदन के अनुसार हिंदी सहित सभी भारतीय भाषाओं में गूगल सर्च करने वालों की संख्या 17 करोड़ हो चुकी है और आगामी चार वर्षों में बढ़

**मीडिया में हिंदी छाई हुई है। एक अनुमान के अनुसार भारत के सत्तर प्रतिशत समाचारपत्रों की भाषा हिंदी है और पाठक संख्या की दृष्टि से शीर्ष स्थानों पर हिंदी अखबारों का ही कब्जा है। इंडियन रीडरशिप सर्वे -2014 के अनुसार (अभी तक यह अंतिम रपट है) पाठक संख्या की दृष्टि से प्रथम तीन स्थान पर हिंदी समाचारपत्र, 'दैनिक जागरण' (1.66 करोड़), 'हिंदुस्तान' (1.47 करोड़), एवं 'दैनिक भास्कर' (1.38 करोड़) हैं, जबकि चौथे स्थान पर मलयालम पत्र 'मनोरमा' है (88 लाख)।**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 45



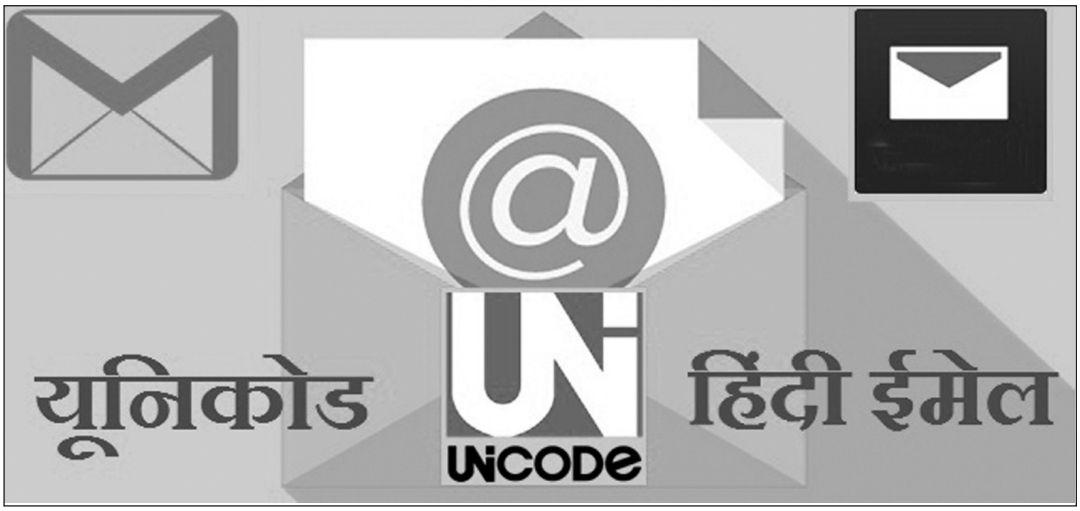


कर 30 करोड़ हो जाने का अनुमान है।

आज इंटरनेट पर अनेक हिंदी साहित्यिक पत्रिकाएँ (हंस, ज्ञानोदय, कथादेश आदि) देवनागरी में पढ़ी जा सकती हैं। इमरान खान जैसे लोग धड़ाधड़ हिंदी में एप्स का विरचन कर रहे हैं। 14 फरवरी, 2017 के 'अमर उजाला' की एक रपट के अनुसार स्वयं इमरान खान (अभिनेता नहीं) ने गणित और विज्ञान में 65 शैक्षणिक एप्स बनाए हैं और उन्हें अब तक लाखों लोगों ने डाउनलोड भी किया है। गुरुग्राम की भाषा तकनीक कंपनी, प्रोसेस नाइन टेक्नालॉजीज ने 2016 के उत्तरार्ध में स्मार्ट फोन के लिए एक बहुभाषी की-बोर्ड 'मॉक्स वर्ड्स' बाजार में उतार दिया है, जिससे ऐसे फोन का उपयोग हिंदी सहित 22 भारतीय भाषाओं में संभव हो गया है। भारतीयों के बढ़ते इंटरनेट मोह एवं बढ़ती क्रय शक्ति के कारण व्यापार में भी हिंदी पैंठ कर रही है। इसके कारण एक रोचक परिस्थिति भी उत्पन्न हुई है। 2 अप्रैल, 1917 की 'द हिंदू' की एक रपट के अनुसार अमेरिका, इंग्लैंड और फ्रांस आदि देशों की कंपनियों में होड़-सी लगी हुई है कि वे अपने आनलाइन ब्रोशर आदि भारतीय उपभोक्ता तक पहुँचा सकें। अतः अनुवादकों की बन आई है और वे दो रुपये प्रति शब्द की दर से काम कर रहे हैं। यूनीकोड आदि यूनीवर्सल फॉन्टों ने देवनागरी लिपि को संगणकों (कंप्यूटरों) पर प्रतिष्ठित कर दिया है।

भारत सरकार के राजभाषा विभाग के फरवरी, 2012 के आदेश के अनुसार सभी सरकारी कार्यालयों में यूनीकोड फॉन्टों, संगत सॉफ्टवेयर तथा इन-स्क्रिप्ट कुंजीपटल का व्यवहार आवश्यक है। इसका एक लाभ यह है कि एक बार सीख लेने पर सभी भारतीय भाषाओं में टंकण सरलता से किया जा सकता है।

अभी तक संविधान के अनुच्छेद 120, 210 तथा 343 से अनुच्छेद 351 तक के अंतर्गत हिंदी के उपयोग को बढ़ाने संबंधी संवैधानिक प्रावधान किए गए तथा राजभाषा अधिनियम जारी किया गया। 1967 में सभी राज्यों के शिक्षा मंत्रियों के एक सम्मेलन में, जिसकी अध्यक्षता भारत के तत्कालीन शिक्षा मंत्री श्री त्रिगुण सेन ने की, यह तय हुआ कि राजभाषा कहलाने का अधिकार एकमात्र हिंदी को है। सम्मेलन में यह भी निर्णय हुआ कि सभी उच्चतर शिक्षा संस्थानों में माध्यम केवल मातृभाषा हो।

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 46

**अनेक राज्य सरकारें अवश्य ही हिंदी की प्रतिष्ठा के लिए विज्ञान लेखकों सहित सभी लेखकों को सम्मानित और पुरस्कृत करती हैं। हर्ष की बात है कि हरियाणा साहित्य अकादमी ने भी राज्य के स्वर्ण जयंती वर्ष से विज्ञान तथा प्राविधि लेखकों को पुरस्कृत करना प्रारंभ कर दिया है। वस्तुतः ऐसी एजेंसियों द्वारा हिंदी विज्ञान लेखकों को महत्त्व दिया जाना विज्ञान के क्षेत्र में हिंदी को प्रतिष्ठित करने की दृष्टि से अवश्य ही सहायक होगा।**

राजभाषा हिंदी के कार्यान्वयन को गति देने तथा ऐसे प्रयासों पर तीक्ष्ण दृष्टि बनाए रखने के लिए केंद्रीय हिंदी समिति, हिंदी सलाहकार समिति, संसदीय राजभाषा समिति, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति आदि का गठन किया गया। इन संगठनों ने कुछ अत्यंत महत्त्वपूर्ण कार्य भी किए यद्यपि कुछ वर्षों से इनमें से अधिकतर सुस्त पड़े हैं। वर्तमान केंद्र की भाजपा सरकार अवश्य ही प्रयन्न कर रही है और आदेश हुआ है कि सांवैधानिक पदों पर बैठे हिंदी जानने वाले सभी लोग सार्वजनिक रूप से केवल हिंदी में बोलें। केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE) के सभी विद्यालयों में दसवीं कक्षा तक हिंदी का पठन -पाठन भी अनिवार्य कर दिया गया। फिर भी हिंदी केवल कछुए की चाल से ही आगे बढ़ती प्रतीत होती है। कारण अनेक हैं, जैसे सरकारी एजेंसियों में पर्याप्त सक्रियता तथा सही दृष्टि का अभाव, जनसाधारण की अकर्मण्यता, दास प्रवृत्ति एवं हिंदी की क्षमताओं के प्रति अज्ञानता, हिंदी मीडिया का भाषा संबंधी विकृत दृष्टिकोण, शैक्षणिक संस्थानों की उदासीनता तथा दक्षिणी राज्यों विशेषकर तमिलनाडु द्वारा अनावश्यक एवं दुराग्रहपूर्ण विरोध। लेख के इस भाग में इन सभी पर एक दृष्टि डालना समीचीन होगा।

जैसा कि लिखा जा चुका है, राजस्थान, बिहार, मध्य प्रदेश तथा उत्तर प्रदेश के उच्च न्यायालयों को हिंदी में काम करने की अनुमति है, परंतु छत्तीसगढ़, झारखंड, उत्तराखंड को अज्ञात कारणों से यह अनुमति नहीं मिल सकी। तमिलनाडु और गुजरात को भी अपनी स्थानीय भाषाओं में कार्य करने की अनुमति नहीं मिली। समझ में नहीं आता कि ऐसा रवैया क्यों अपनाया गया? केंद्र सरकार की नई सोच से अब हो सकता है कि भविष्य में कभी यह संभव हो जाए। परंतु प्रश्न उठता है कि संविधान में पहले से ही व्यवस्था क्यों नहीं की गई कि सभी उच्च न्यायालयों में भारतीय भाषाओं में न्यायिक कार्यवाही संपन्न की जा सकती। उच्चतम न्यायालय में भी हिंदी का न होना समझ से परे है।

'हिंदी साहित्य सम्मेलन' जैसी संस्था ने तो विज्ञान साहित्य को उचित सम्मान दिया है तथा विज्ञान-लेखकों को सम्मानित करने की परंपरा भी डाली है (स्वयं लेखक को सम्मेलन ने 'विद्या वाचस्पति' की उपाधि से अलंकृत किया है), परंतु साहित्य अकादमी ने अभी तक ऐसा करना उचित नहीं समझा है। 'इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार' भी अभी तक किसी भारतीय भाषा के विज्ञान लेखक को नहीं प्रदान किया गया है। अनेक राज्य सरकारें अवश्य ही हिंदी की प्रतिष्ठा के लिए विज्ञान लेखकों सहित सभी लेखकों को सम्मानित और पुरस्कृत करती हैं। हर्ष की बात है कि हरियाणा साहित्य अकादमी ने भी राज्य के स्वर्ण जयंती वर्ष से विज्ञान तथा प्राविधि लेखकों को पुरस्कृत करना प्रारंभ कर दिया है। वस्तुतः ऐसी एजेंसियों द्वारा हिंदी विज्ञान लेखकों को महत्त्व दिया जाना विज्ञान के क्षेत्र में हिंदी को प्रतिष्ठित करने की दृष्टि से अवश्य ही सहायक होगा।

भारतीय प्रशासनिक सेवा आयोग ने सिविल सेवा प्रवेश परीक्षा में हिंदी माध्यम विकल्प दिया अवश्य है,

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 47



परंतु प्रारंभिक परीक्षा के प्रश्नपत्र दो में अभी तक तीस अंकों का अंग्रेजी परिज्ञान (Comprehension केवल दसवीं कक्षा के स्तर का) अभी तक अनिवार्य है। यद्यपि यह प्रश्नपत्र केवल क्वालीफाइंग ही है, फिर भी अंग्रेजी की अनिवार्यता क्यों? क्या अहिंदीभाषी राज्यों की सामान्य जनता को जिनसे अफसरों का सेवा के दौरान साबका पड़ने वाला है, अंग्रेजी ज्ञान होता ही हैं? दूसरी ओर ऐसे राज्य का प्रतियोगी यदि किसी हिंदी राज्य में नियुक्त हो जाएगा तो बिना साधारण हिंदी परिज्ञान के उसे समस्या नहीं होगी क्या? सही कदम तो यह होता कि नियुक्ति के पश्चात व्यक्ति को दो-तीन माह की सामान्य सी ट्रेनिंग राज्य विशेष की भाषा में दे दिए जाने का प्रावधान कर दिया जाता। संघ लोक सेवा आयोग मुख्य परीक्षा में भी दो अनिवार्य प्रश्नपत्र यद्यपि केवल क्वालीफाइंग, भाषा के हैं। प्रथम के लिए प्रतियोगी हिंदी सहित किसी भी भारतीय भाषा का चुनाव कर सकता है, परंतु द्वितीय तो अनिवार्यतः अंग्रेजी का है। अंग्रेजी को यह अनावश्यक महत्त्व क्यों? स्मरणीय है कि लेखक ने केंद्रीय हिंदी समिति की एक बैठक में (लेखक वर्ष 2000-2004 तक सदस्य था) इसी वर्चस्व को समाप्त करने के लिए विचार रखा था कि भाषा प्रश्नपत्र केवल एक हो जिसमें प्रतियोगी को अंग्रेजी सहित किसी भारतीय भाषा को चुनने का विकल्प हो। यह स्वीकृत भी हुआ पर अनजाने कारणों से कभी भी कार्यान्वित नहीं हुआ। अंग्रेजी की इसी अनिवार्यता के कारण हिंदी माध्यम के अत्यंत कम प्रतियोगियों को नागरिक सेवा में चयन मिल पाता है और इस कारण जनसामान्य में हिंदी उपेक्षा का भाव गंभीर बना हुआ है। कोई आश्चर्य नहीं कि इस स्कीम के लागू होने के पश्चात 2014 में केवल साढ़े तेरह प्रतिशत प्रतियोगियों ने हिंदी विकल्प चुना।

केवल संघ लोक सेवा आयोग ही नहीं, लगभग सभी कार्यालयों, व्यापारिक प्रतिष्ठानों एवं विश्वविद्यालय आदि उच्चतर शैक्षणिक संस्थानों में व्यावहारिक भाषा केवल अंग्रेजी है तथा मात्र औपचारिक रूप से हिंदी की उपस्थिति हो सकती है। उदाहरणार्थ, नाम पट्टिकाएँ हिंदी में होंगी यद्यपि कार्य-व्यापार अंग्रेजी में होता होगा। इन्हीं कारणों से हिंदी विकल्प चुनने वालों को हेय दृष्टि से देखा जाता है। मान लीजिए कि हिंदी (अथवा किसी अन्य भारतीय भाषा) विकल्प वाला किसी उच्चतर शिक्षण संस्थान में प्रवेश पा जाता है, परंतु वहाँ फिर अंग्रेजी का सामना! अब वह क्या करे? यह स्थिति उसे अवसादग्रस्त कर देती है। इसी के चलते 2010 में अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, दिल्ली में छात्र अनिल कुमार ने आत्महत्या कर ली थी। प्रति वर्ष भारतीय प्रोद्यौगिकी संस्थानों में भी 4-5 ऐसे कांड होते ही रहते हैं। विगत पाँच वर्षों में भारतीय प्रोद्यौगिकी संस्थान, चेन्नई में दस छात्रों ने आत्महत्या की।

इन्हीं कारणों से अब गली-गली अंग्रेजी माध्यम विद्यालय खुलते जा रहे हैं। राज्य सरकारें भी भाषा माध्यम के संबंध में पैर वापस खींचती प्रतीत हो रही हैं। हरियाणा में अंग्रेजी के बढ़ते महत्त्व के कारण इंग्लैंड की सरकार ने सहायता का प्रस्ताव दिया है। बिहार की स्थिति तो हिंदी 'इंडिया टुडे' ने अपने 16 मार्च, 2016 के अंक में एक अत्यंत व्यंग्यात्मक यद्यपि पीड़ादायक

**केवल संघ लोक सेवा आयोग ही नहीं, लगभग सभी कार्यालयों, व्यापारिक प्रतिष्ठानों एवं विश्वविद्यालय आदि उच्चतर शैक्षणिक संस्थानों में व्यावहारिक भाषा केवल अंग्रेजी है तथा मात्र औपचारिक रूप से हिंदी की उपस्थिति हो सकती है। उदाहरणार्थ, नाम पट्टिकाएँ हिंदी में होंगी यद्यपि कार्य-व्यापार अंग्रेजी में होता होगा। इन्हीं कारणों से हिंदी विकल्प चुनने वालों को हेय दृष्टि से देखा जाता है।**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 48

लेख 'अब अंग्रेजी बोलल जाई' में स्पष्ट की है। अप्रैल 2017 में समाचार प्राप्त हुआ कि सी.बी.एस.ई. अपने से संबद्ध विद्यालयों में 2018-19 के सत्र से 9वीं तथा 11वीं में अंग्रेजी की व्यावहारिक परीक्षा कराएगी ताकि विद्यार्थी की उस भाषा में संभाषण योग्यता परखी जा सके।

यह सत्य ही है कि विद्यार्थियों का संतोषजनक अंग्रेजी ज्ञान बराबर कम होता जा रहा है। वर्ल्ड इंग्लिश प्रोफिशिएंसी इंडेक्स की नवीनतम रपट के अनुसार इंडेक्स में भारत का स्थान निरंतर गिरता जा रहा है जबकि अंग्रेजी जानने वालों की संख्या में वृद्धि हो रही है। इसी वर्ष प्रकाशित 11वीं रपट 'ग्रामीण भारत में शिक्षा स्थिति' के अनुसार ऊपरी कक्षाओं में अंग्रेजी

**विश्व के बीस सर्वाधिक प्रगतिशील देश मातृभाषा का सहारा लेते हैं जब कि बीस सबसे पिछड़े देश किसी दूसरी भाषा पर निर्भर हैं। उनका निष्कर्ष है कि जब तक भारत अंग्रेजी की डोर पकड़े रहेगा, वह शीर्ष देशों की श्रेणी में नहीं आ सकेगा।**

फिसल रही है। रपट के अनुसार वर्ष 2009 की अपेक्षा 2016 में अंग्रेजी के सरल वाक्यों को बोल और समझ लेने वाले 8वीं कक्षा के विद्यार्थियों की संख्या में पंद्रह प्रतिशत की गिरावट पाई गई (शैक्षिक मंथन, फरवरी 2017)। 27 सितंबर, 2016 के 'अमर उजाला' की एक रपट के अनुसार 2016 में भारतीय प्रोद्यौगिकी संस्थानों में प्रवेश पाए एक हजार प्रतियोगियों में तीस प्रतिशत भाषागत समस्या (इसमें हिंदी एवं अंग्रेजी दोनों विकल्पों वाले थे, यद्यपि अंग्रेजी के बहुत अधिक थे) से परेशान थे। उनके लिए अलग से कोचिंग की व्यवस्था करनी पड़ी और फिर भी साठ का प्रवेश निरस्त कर देना पड़ा। अनेक सर्वेक्षणों के अनुसार केंद्रीय विद्यालयों तक में विद्यार्थियों का अंग्रेजी ज्ञान सतही रह जाता है, जिसके कारण नौकरियाँ प्राप्त करने में उन्हें कठिनाई होती है। मई 2012 के 'न्यूयार्क टाइम्स' के वेब पोर्टल के ब्लॉग India Ink में एक बहुराष्ट्रीय कंपनी के भारतीय हिस्सेदार श्री मोहित चंद्रा ने लिखा कि अधिकांश भारतीय युवक अपने को अंग्रेजी में प्रभावशाली ढंग से व्यक्त नहीं कर पाते; उनके रिजूम (Resume)हास्यास्पद से होते हैं।

यह सब स्वाभाविक भी है। दूसरे की भाषा में पारंगत हो पाना आसान नहीं होता। फिर भी हम अंग्रेजी के आकर्षण से अनावश्यक रूप से बंधे रहना चाहते हैं। आज से तीन-चार वर्ष पूर्व दिल्ली विश्वविद्यालय के अंग्रेजी विभाग के तत्कालीन अध्यक्ष डॉ. सुमन्यु सत्पथी ने 'द हिंदू' के 13 अक्तूबर, 2012 के अंक में एक पत्र में लिखा था कि अंग्रेजी के प्रति हमारा मोह 'पैथेटिक' (अंधा मोह) है। संक्रांति सानू, राजीव मेहरोत्रा एवं कार्ल क्लेमेंस ने अपनी बहुचर्चित पुस्तक 'भाषा नीतिः द इंग्लिश मीडियम मिथ, डिसमैंटलिंग बैरियर्स टु इंडियाज ग्रोथ' (Cinnamonteal Goa, 2014) में आँकड़ों के साथ स्पष्ट किया है कि विश्व के बीस सर्वाधिक प्रगतिशील देश मातृभाषा का सहारा लेते हैं, जबकि बीस सबसे पिछड़े देश किसी दूसरी भाषा पर निर्भर हैं। उनका निष्कर्ष है कि जब तक भारत अंग्रेजी की डोर पकड़े रहेगा, वह शीर्ष देशों की श्रेणी में नहीं आ सकेगा। वस्तुतः यह सोचना कि हमारा अंग्रेजी ज्ञान अतरराष्ट्रीय संबंधों एवं व्यापार के लिए अनिवार्य है, भ्रामक है। जापान, दक्षिण कोरिया, ताइवान जैसे देश गैर अंग्रेजी भाषा-भाषी हैं, परंतु धड़ल्ले से अंतरराष्ट्रीय व्यापार में भाग लेते हैं। वहाँ की सैमसंग, ट्योटा, होंडा आदि कंपनियों की समस्त विश्व में धाक है। इजरायल एक अन्य देश है जो विज्ञान और व्यापार के क्षेत्र में स्थानीय भाषा हिब्रु को ही वरीयता देता है। इज़रायल के विश्वप्रसिद्ध तकनीकी विषयों के शिक्षण

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 49



संस्थान 'टेक्निऑन' तक में माध्यम हिब्रु ही है। यहाँ प्रशिक्षण पाने के इच्छुक विदेशी विद्यार्थियों को प्रारंभ में ही पाँच माह की ट्रेनिंग हिब्रु भाषा की दे दी जाती है।

अंग्रेजी पर अनावश्यक जोर एक गंभीर सामाजिक समस्या भी उत्पन्न कर रहा है। स्वतंत्र गणतंत्र देश में अनपेक्षित रूप से दो नए प्रकार के वर्ग उभरते जा रहे हैं– अंग्रेजी पर अच्छी पकड़ रखने वालों का तथा उसके ज्ञान से वंचित अति सामान्य जनता का। स्पष्टतः दूसरे के प्रति प्रथम वर्ग का दृष्टिकोण औपनिवेशिक मानसिकता वाला ही रहता है। अवश्य ही यह स्थिति एक प्रजातांत्रिक देश के लिए हितकर नहीं है।

सच तो यह है कि हमारा हिंदी ज्ञान भी, अंग्रेजी पर

**अंग्रेजी पर अनावश्यक जोर एक गंभीर सामाजिक समस्या भी उत्पन्न कर रहा है। स्वतंत्र गणतंत्र देश में अनपेक्षित रूप से दो नए प्रकार के वर्ग उभरते जा रहे हैं –अंग्रेजी पर अच्छी पकड़ रखने वालों का तथा उसके ज्ञान से वंचित अति सामान्य जनता का। स्पष्टतः दूसरे के प्रति प्रथम वर्ग का दृष्टिकोण औपनिवेशिक मानसिकता वाला ही रहता है। अवश्य ही यह स्थिति एक प्रजातांत्रिक देश के लिए हितकर नहीं है।**

अनावश्यक बल दिए जाने के कारण घटने लगा है। आज की पीढ़ी बिना अंग्रेजी शब्दों के मिश्रण के हिंदी बोल ही नहीं सकती। कभी-कभी तो वाक्य में केवल क्रियापद ही हिंदी में होते हैं। इसका प्रभाव अब मीडिया पर भी पड़ रहा है। समाचारपत्रों की भाषा अत्यधिक मिलावट के कारण कुछ अजीबोगरीब होती जा रही है। एक लेखक महोदय ने तो इस मिश्रित भाषा हिंग्लिश में उपन्यास लिखने भी प्रारंभ कर दिए हैं और उनकी पुस्तकों के विज्ञापन स्पष्ट कहते हैं – 'आइये भारत की नई लाइवली, वाइब्रेंट बोली और भाषा का हार्टी वेलकम करें'। ऐसी प्रवृत्ति को बहुत पहले पहचान कर 1945 में विश्व भारती पात्रिका के माध्यम से आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सचेत किया था ''कहीं हम भाषाओं की लस्टम-पस्टम रेल न खड़ी कर दें।'' पर आज वही हो रहा है। कभी बाबूराव विष्णु पराड़कर और गणेश शंकर विद्यार्थी की मीडिया भाषा ने लोगों की पहचान शुद्ध हिंदी से कराई थी, परंतु आज वही मीडिया (दूरदर्शन सहित) हिंदी के जारजीकरण में लगा हुआ है। स्थिति इतनी बिगड़ चुकी है कि कुछ वर्षों पूर्व इंदौर के ख्यातनामा पत्रकार श्री प्रभु जोशी को आंदोलन तक छेड़ना पड़ा था, यद्यपि वह बेअसर रहा। एक समय भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री नरसिंह राव ने चेतावनी दी थी कि यदि यही सब चलता रहा तो दोनों भाषाओं के ज्ञान से रहित होकर ''यह अनपढ़ों और मूक व्यक्तियों का देश बन जाएगा''। इसी को और चुटीली भाषा में व्यक्त करते हुए 5 फरवरी,1997 को इंडियन एक्सप्रेस में प्रकाशित अपने एक पत्र में मुंबई के श्री टोनी लुई ने लिखा था– ''हम भाषाई हिजड़े (Linguistic eunuchs) बन जाएंगे''। अत्यंत दुर्भाग्य की बात है कि यह सब सच होता जा रहा है। अक्तूबर, 2016 में विश्व की जानी-मानी भाषा विशेषज्ञ एला फ्रांसिस सैंडर्स ने 'टाइम्स ऑफ इंडिया' को दिए गए एक साक्षात्कार के दौरान पूछे गए प्रश्न कि ''क्या आपके विचार में (अंग्रेजी के प्रभाव से) हमारा अपना शब्दकोश सीमित होता जा रहा है और हम अपने (देसी) मुहावरों का प्रयोग करने में असमर्थ होते जा रहे हैं'' के उत्तर में कहा, खेदपूर्वक मुझे लगता है कि यह सही है।

वस्तुतः संक्रांति सोनू इत्यादि के पीछे दिए गए निष्कर्षों (English Medium Myth) को नकार पाना कठिन है। यह भी स्मरणीय है कि संक्रांति सोनू प्राविधि विशेषज्ञ हैं तथा कार्ल क्लेमेंस एक सॉफ्टवेयर विशेषज्ञ। इस संबंध में कुछ और भी तथ्य दृष्टव्य हैं–

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 50

ASER (Annual Status of Education Report) की नवीनतम रपट के अनुसार मातृभाषा के माध्यम से विज्ञान एवं गणित विषयों को विद्यालयों में विद्यार्थी अधिक अच्छी तरह समझ पाए, जबकि अंग्रेजी माध्यम वाले विद्यार्थियों में इन विषयों में अनेक सिद्धांतगत भ्रांतियाँ उत्पन्न हुईं। इसी प्रकार (National Multilingual Educational Resource Consortium) के मुख्य सलाहकार श्री अजीत मोहंती भी कुछ समय पूर्व इसी निष्कर्ष पर पहुँचे और उन्होंने कहा कि ''अंग्रेजी माध्यम से बच्चों को पढ़ाने की मौजूदा लालसा कोरी नासमझी है। कायदे से हमें उन्हें इतनी जल्दी अंग्रेजी सिखाने की होड़ में शामिल नहीं होना चाहिए। हम उन्हें अच्छी देखभाल, संस्कार और मातृभाषा आधारित गुणवत्तापूर्ण शिक्षा दें तो बेहतर होगा।'' इस संबंध में महान् भारतीय वैज्ञानिक, भारत के प्रथम राष्ट्रीय प्रोफेसर, बोस-आइंस्टाइन सिद्धांत के प्रतिपादक डॉ. सत्येंद्र नाथ बोस, जिनके नाम पर ही परमाणु के एक मूल कण का नाम 'बोसान' रख दिया गया है, का निम्न कथन भी द्रष्टव्य है– ''मेरा मानना है कि बच्चों को विदेशी भाषा में विज्ञान को शिक्षा देना अप्राकृतिक और अनैतिक है। इस प्रकार वे तथ्यों का ज्ञान तो प्राप्त कर सकते है परंतु विज्ञान की आत्मा से अपरिचित ही रहेंगे।'' स्मरणीय है कि डॉ. बोस की समस्त प्रारंभिक शिक्षा बंगला माध्यम से हुई थी और कोलकाता विश्वविद्यालय में वे अपने भौतिकी के छात्रों के लिए मूलतः इसी भाषा का प्रयोग करते थे। हाल ही में टाटा समूह के नए अध्यक्ष बने श्री नटराजन चंद्रशेखरन ने भी स्कूली शिक्षा मातृभाषा तमिल माध्यम से ही ग्रहण की थी।

प्रारंभिक शिक्षा के क्षेत्र में अंग्रेजी की महामारी के समाज पर पड़ने वाले प्रभावों के उपरांत अब प्रश्न उठता है कि भविष्य में हिंदी की दिशा क्या होनी चाहिए। लेख के प्रारंभिक भाग से स्पष्ट है कि हिंदी ने अभूतपूर्व प्रगति की है यद्यपि उसकी संपूर्ण प्रगति के मार्ग में वे अनेक बाधाएँ अभी भी बनी हुई हैं जिनकी चर्चा लेख के मध्य भाग में की गई है। अतः उसकी दिशा का निर्धारण (केवल सरसरी तौर पर) उन्हीं बाधाओं के संदर्भ में कुछ इस प्रकार किया जा सकता है।

अंग्रेजी के कारण देश में उत्पन्न हो रहे दो वर्गों के मध्य खाई पाटने का कार्य तो सरकार ही कर सकती है। न्यायालयों में हिंदी सहित सभी देशी भाषाओं का निर्बाध प्रयोग और प्रशासनिक तंत्र की उनके प्रति उदासीनता को भंग करना निश्चित रूप में सरकार की प्राथमिकता होनी चाहिए। प्रारंभिक शिक्षा का माध्यम तो कहीं भी अंग्रेजी को नहीं होना चाहिए। उच्चतर शैक्षणिक एजेंसियों को भी हिंदी की क्षमताओं से परिचित होना पड़ेगा ताकि इस स्तर की (विश्वविद्यालयीय, तकनीकी, चिकित्सकीय शिक्षा आदि) शिक्षा में हिंदी माध्यम का मार्ग प्रशस्त हो। इसमें समय लगेगा, परंतु अभी तक तो प्रारंभ भी लगभग नहीं ही हो सका है। शोध के क्षेत्र में (मुख्यतः विज्ञान विषयों में) कुछ ही प्रबंध अब तक हिंदी में सामने आए हैं, यद्यपि पर्याप्त शब्दकोश उपलब्ध हैं और गिनती के ही सही, स्तरीय शोध जर्नल भी प्रकाशित हो रहे हैं। यह सब सर्वथा अपर्याप्त है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग जैसी एजेंसियाँ इस दिशा में बहुत कुछ कर सकती हैं। इस संबंध में ध्यान देने योग्य बात यह है कि प्रत्येक तकनीकी शब्द का हिंदीकरण अनावश्यक और उसे दुर्बोध बनाने वाला

**''मेरा मानना है कि बच्चों को विदेशी भाषा में विज्ञान को शिक्षा देना अप्राकृतिक और अनैतिक है। इस प्रकार वे तथ्यों का ज्ञान तो प्राप्त कर सकते है परंतु विज्ञान की आत्मा से अपरिचित ही रहेंगे।''**
**- डॉ. सत्येंद्र नाथ बोस**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 51



**अंग्रेजी के कारण देश में उत्पन्न हो रहे दो वर्गों के मध्य खाईं पाटने का कार्य तो सरकार ही कर सकती है। न्यायालयों में हिंदी सहित सभी देशी भाषाओं का निर्बाध प्रयोग और प्रशासनिक तंत्र की उनके प्रति उदासीनता को भंग करना निश्चित रूप में सरकार की प्राथमिकता होनी चाहिए। प्रारंभिक शिक्षा का माध्यम तो कहीं भी अंग्रेजी को नहीं होना चाहिए। उच्चतर शैक्षणिक एजेंसियों को भी हिंदी की क्षमताओं से परिचित होना पड़ेगा ताकि इस स्तर की (विश्वविद्यालयीय, तकनीकी, चिकित्सकीय शिक्षा आदि) शिक्षा में हिंदी माध्यम का मार्ग प्रशस्त हो। इसमें समय लगेगा परंतु अभी तक तो प्रारंभ भी लगभग नहीं ही हो सका है।**

होगा। यही दिशा अपनाई भी जाती रही है और आगे भी ऐसा ही होना चाहिए। इन सब कार्यों से हिंदी माध्यम से प्रशिक्षित लोगों के लिए उच्चतम कोटि की नौकरियों का मार्ग खुलेगा और जनसामान्य की मौजूदा दास प्रवृत्ति पर धीरे-धीरे अवश्य ही विराम लग जाएगा।

हिंदी की विभिन्न बोलियों जैसे भोजपुरी, राजस्थानी, मैथिली, छत्तीसगढ़ी, हरियाणवी, मगही आदि को स्वतंत्र भाषा के समकक्ष दर्जा देने की और माँगने की होड़ लगी हुई है। इस पर लगाम कसनी होगी। ये सब बोलियाँ मिलकर ही तो सुंदर बहुआयामी हिंदी का निर्माण करती हैं, वर्तमान में बेशक चाहे स्टैंडर्ड हिंदी के रूप में मान्यता खड़ी बोली की हो। प्रसन्नता की बात है कि दक्षिणी राज्यों में भी हिंदी पढ़ने की ललक बढ़ती जा रही है। वर्ष 2012 में दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा की 'हिंदी प्रवीण' परीक्षा में तमिलनाडु के साढ़े तीन लाख विद्यार्थियों ने भाग लिया था जबकि 2016 में यही संख्या 6 लाख तक पहुंच गई।

मीडिया को हिंदी के विकृतीकरण की प्रवृत्ति त्यागनी होगी, यद्यपि अनेक अंग्रेजी शब्दों, जिनका विकल्प जनमानस में हैं ही नहीं, जैसे गेयर, स्टेशन, रेल, टैक्सी, सर्चलाइट, सर्वर, ब्लाग इत्यादि को वैसा का वैसा हिंदी में ले लेना अच्छा रहेगा। मीडिया को न केवल अनावश्यक अंग्रेजी शब्दों बल्कि गैरजरूरी यद्यपि हिंदी भाव वाले नए शब्दों जैसे, रोचक और पथ्य वाचन, गैरविलायती माल आदि से भी बचना होगा। मीडिया को जनमानस में यह बात बैठा देनी होगी कि व्यक्ति, समाज और देश की प्रगति का आधार अंग्रेजी नहीं बन सकती।

यह भी ध्यान में रखना होगा कि सूचना-क्रांति और वैश्वीकरण के इस युग में देश से अंग्रेजी का नामोनिशान मिटा देने का प्रयास स्वास्थ्यकर न होकर प्रगति के मार्ग में बाधक होगा। आवश्यकता केवल इस बात की है उसका अध्ययन केवल एक भाषा के रूप में और वह भी केवल कामचलाऊ स्तर तक किया जाए। शिक्षण माध्यम के रूप में (उच्चतम स्तर तक एवं सभी विषयों में) हिंदी तथा अन्य देसी भाषाओं का प्रयोग ही श्रेयस्कर रहेगा। देश में सर्वमान्य भाषा के रूप में केवल हिंदी को बढ़ावा देना होगा, यद्यपि हिंदी क्षेत्रों के विद्यार्थियों के लिए किसी एक अन्य भारतीय भाषा की जानकारी भी अनिवार्य होनी चाहिए। इससे अहिंदी राज्यों का विरोध घटेगा।

स्मरणीय है कि वर्तमान स्तर पर अंग्रेजी का पिष्टपेषण मौलिक प्रतिभा के समुचित विकास में निश्चित रूप से बाधक सिद्ध हो रहा है। यह भी द्रष्टव्य है कि लगभग बीस वर्ष पूर्व यूनेस्को ने दिशा निर्देश किया था कि संस्कृति से शिक्षा का उत्स हो व विकास के लिए प्रतिबद्धता हो। परंतु शिक्षा की जड़ें तो संस्कृति में तभी हो सकती हैं जब माध्यम कोई विदेशी भाषा न हो क्योंकि अपनी भाषा ही संस्कृति की वाहक होती है।

**लेखक शिक्षाविद्, वैज्ञानिक व**
**केंद्रीय हिंदी समिति के पूर्व सदस्य हैं।**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 52

भारत की सांस्कृतिक व सामाजिक एकात्मता में देश भर में स्थित जिन विभिन्न मठों व मंदिरों का विशेष महत्त्व हैं उनमें द्वादश ज्योतिर्लिंग विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उत्तर-दक्षिण-पूर्व -पश्चिम को माला की तरह एक सूत्र में पिरोने वाले द्वादश ज्योतिर्लिंगों में श्रीशैलम् स्थित श्री मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग शिव एवं शक्ति के अद्वैतभाव का धाम है। यही एक ऐसा ज्योतिर्लिंग है जहाँ माँ पार्वती व शिव दोनों एक ही विग्रह में विराजमान हैं। भारतीय दर्शन के मर्मज्ञ विद्वान श्री दामोदर शाण्डिल्य ने श्रीशैलम् की तीर्थयात्रा से लौटकर इस यात्रा का वृतांत 'मंगल विमर्श' के पाठकों के लिए विशेष रूप से प्रस्तुत किया है –

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 53

दामोदर शाण्डिल्य

## शिव एवं शक्ति के अद्वैतभाव का धाम

# श्री मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग श्रीशैलम्

हिंदू समाजजीवन में राष्ट्र की एकात्मता, समाज में आत्मीयता, प्रेम, समरसता, जीवनयात्रा में उमंग, उत्साह, आशावादिता, नित्य नवीनता तथा आस्था बनाए रखने के लिए, संपूर्ण भारतवर्ष में फैले द्वादश ज्योतिर्लिंग, बावन शक्ति-पीठ, अष्ट विनायक, सप्तपुरियाँ, सप्तनदियाँ, चार धाम, हजारों तीर्थों तथा धर्मक्षेत्रों की यात्रा कर जीवन में शुचिता, पवित्रता तथा समाधान आहूत करने की व्यवस्था हमारे मनीषियों, ऋषि-मुनियों ने बनाई है। इस रूप में अपने मानव जीवन को सार्थक, सफल तथा चारों पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष) प्राप्ति की बहुत ही सरल तथा मनोवैज्ञानिक व्यवस्था अपने समाज में है।

भारत भर में फैले द्वादश ज्योतिर्लिंग सकारात्मक ऊर्जा के केंद्र हैं। हजारों तपपूत साधकों, तपस्वियों की तपस्या के ऊर्जा कणों से आवेशित जाग्रत-स्थान हैं। इन ज्योतिर्लिंगों का स्पर्श कर, गंगाजल से अभिषेक करना, समाज में जीवन की सफलता और कृतकृत्यता का प्रतीक माना जाता है।

'श्रीशैलै मल्लिकार्जुनम्'-प्राचीन क्रौंच पर्वत, श्री पर्वत, श्रीक्षेत्र के नाम से विख्यात श्री शैलम् तेलंगाना में स्थित है। लिंग का अर्थ संस्कृत में 'चिह्न' होता है। शिवलिंग अर्थात शिव का चिह्न। शिव ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं। ब्रह्माण्ड ही शिव का शरीर है अतः शिवलिंग ब्रह्माण्ड का प्रतीक है। यह सृष्टि 'अखंड मंडलाकार' है इसमें व्याप्त ब्रह्माण्ड शिव का प्रतीक शिवलिंग है। शिवलिंग का पूजन अर्थात् ब्रह्माण्ड में व्याप्त शिवतत्व का पूजन है।

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 54

**द्वादश ज्योतिर्लिंग** — सोमनाथ (सौराष्ट्र, गुजरात), मल्लिकार्जुन (कुर्नूल, तेलंगाना), महाकालेश्वर (उज्जैन, मध्य प्रदेश), ओंकारेश्वर (मध्य प्रदेश), केदारनाथ (उत्तराखंड), भीमाशंकर (महाराष्ट्र), काशी विश्वनाथ (वाराणसी, उत्तर प्रदेश), त्र्यम्बकेश्वर (नासिक, महाराष्ट्र), वैद्यनाथ (देवघर, झारखंड), नागेश्वर (दारुकावन, गुजरात), रामेश्वरम् (तमिलनाडु) एवं घृष्णेश्वर (औरंगाबाद, महाराष्ट्र)

## मल्लिकार्जुन, श्री शैलम् की विशेषता

द्वादश ज्योतिर्लिंगों में केवल मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग ही शिव और शक्ति के अद्वैतभाव का स्वरूप है। यहाँ शिव और पार्वती दोनों एक ही लिंग (शिव प्रतिमा) में विराजमान हैं। अन्य स्थानों पर शिवलिंग प्रधान विग्रह है तथा बाकी शिव परिवार (माता पार्वती, गणेश एवं नंदी) अलग-अलग विराजित हैं। नंदी का स्थान तो सर्वदूर एक-सा ही है। मल्लिकार्जुन में मल्लिका अर्थात् पार्वती तथा अर्जुन अर्थात् शिव (शिव जी का एक नाम) दोनों का एक ही विग्रह है। यहाँ माता पार्वती का नाम भ्रमारम्भा है। परिसर में स्थित 'कल्याण मण्डप' में अभिषेक स्थल पर शिव-पार्वती की दक्षिणात्यशैली की प्रतिमाएँ हैं। यहाँ संकल्प, पूजन तथा लघुरुद्री का पाठ होता है और फिर गर्भ गृह में जाकर भक्त जलाभिषेक करते हैं। मंदिर में शिव जी की पंचमुखी प्रतिमा नहीं है, अपितु सद्योजान, ईशान, वामदेव, तत्पुरुष तथा अधीर इन पाँच मुखों के अलग-अलग मंदिर हैं। इन पाँचों के अलग-अलग भाव तथा तत्त्व हैं। तांत्रिक कर्मों और काम्यकर्मों के उपासक इनकी पूजा अलग-अलग भाव से करते हैं। शैवमत के अनुसार भैरव शिव रूप ही हैं। अतः विशाल भैरव प्रतिमा भी एक मंदिर में है। विशाल परकोटे से घिरे मंदिर में चारों ओर भिन्न-भिन्न भावों के शिव मंदिर हैं।

## इतिहास

श्री शैलम् का इतिहास हजारों वर्ष प्राचीन है, वैदिककाल के बाद तंत्र शास्त्र का केंद्र रहा है। शैवमत का यह महान केंद्र रहा है। ज्ञात इतिहास में ईसा की दूसरी सदी में प्रसिद्ध सातवाहन सम्राटों की आराध्य स्थली रहा, जिन्होंने यूनानियों से युद्ध किया था। यह इक्ष्वाकु वंश के साम्राज्य में रहा। 248 ईस्वी में चालुक्यों के संरक्षण में रहा। 10वी सदी में काकतेय सम्राटों का आराधना स्थल रहा। इस काल में 70 गाँवों की माफी की जमीन मंदिर को मिली। 1325 ई. में मे ल्लामादे वी

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 55



मंडपम् बना। 1336 ई. में विजयनगर साम्राज्य के श्री कृष्णदेव राय ने दक्षिणगोपुरम् बनाया। इसके पूर्व विजयनगर साम्राज्य के संस्थापक श्री हरिहर राय ने मंदिर का जीर्णोद्धार करवाया था।

1674 ई. में छत्रपति शिवाजी महाराज के संरक्षण में मंदिर रहा। उन्होंने उत्तरी गोपुरम् का निर्माण करवाया था जिसके रखरखाव का कार्य अभी (2017) चल रहा है।

बौद्ध काल में यह स्थान बौद्धधर्म का केंद्र रहा है। सिद्ध नागार्जुन यहाँ के ही थे। आचार्य असंग का भी यहाँ आना हुआ था। म. म. गोपीनाथ कविराज का मानना है कि वैदिक अवधारणा–कि माया और ब्रह्म, शक्ति और शिव एक हैं, इस अवधारणा का प्रभाव बौद्धधर्म पर भी पड़ा था और प्रज्ञापारमिता और बुद्ध के आपासी एकत्व संबंध की व्याख्या यहाँ से ही शुरु हुई थी।

## वीर शैव संप्रदाय और जंगम साधु (जोगी)

शैव उपासना, साधना तथा तंत्र में 'वीरशैव' संप्रदाय एक प्रमुख आम्नाय है। मृत्यु के बाद आत्मा के मोक्ष होने को यह नहीं मानते हैं। इसी पंचभौतिक शरीर को अजर-अमर बना कर जीते जी मोक्ष, आनंद का अनुभव करना इनका लक्ष्य है। योग साधना, प्राण साधना और रस साधना (पारदसिद्धि) से वज्राङ्ग तथा अजर-अमर काया प्राप्त आवागमन में मुक्त हो मोक्षकामी यह संप्रदाय है। योग साधना से भूतजय (पंचभूतों पर विजय) तथा मायाजय (प्रकृति पर जय) के द्वारा सिद्धावस्था, ये साधक प्राप्त करते हैं। महान सिद्ध श्री गोरखनाथ भी शैव सिद्ध थे।

**जब गोरखनाथ हतप्रभ हो गए–** म. म. गोपीनाथ कविराज ने अपने ग्रंथ 'अखंड महायोग का पथ एवं मृत्युविज्ञान' में पृ. 91 एक घटना का उल्लेख किया है-

एक बार श्री गोरखनाथ श्री शैलम् गए और वहाँ वीर शैव सिद्ध श्री अल्लाम प्रभुदेवा से उनकी भेंट हुई। गुरु श्री गोरखनाथ ने उनसे कहा कि मुझे भूतजय से शरीर को वज्राङ्गता प्राप्त हो गई है। इस पर किसी भी प्रहार, धूप, आतप, वर्षा, शीत, वायु का प्रभाव नहीं होता। उन्होंने अपने शरीर पर खड्ग से प्रहार करने को कहा। कई बार तलवार से वार करने पर भी उनका एक लोम भी नहीं टूटा। खड्ग के प्रहार से पहाड़ पर वज्र गिरने जैसी आवाज आती थी। इस पर श्री प्रभुदेवा ने कहा कि आप मेरे शरीर पर प्रहार करो। श्री गोरखनाथ ने तलवार से उनके शरीर पर वार किए। तलवार उनके शरीर में से ऐसे पार हो रही थी कि जैसे हवा में से निकल रही हो। यह देखकर श्री गोरखनाथ जी को बड़ा आश्चर्य हुआ। सिद्ध प्रभुदेवा जी ने कहा– केवल भूतजय आसुरी साधना है। जब तक माया-जय (प्रकृति पर जय) प्राप्त न हो, संयम सिद्धि नहीं होती। अल्लाम प्रभुदेव वीरशैव साधक थे। इस संप्रदाय के साधकों को 'वीराचरम्' कहते हैं। श्री शैलम् इसका केंद्र रहा। वैसे यह संप्रदाय पूरे भारत में फैला हुआ है।

## जंगम साधु

वीरशैव संप्रदाय के साधुओं को उत्तर भारत में 'जंगम' भी कहते हैं। 'जंगम' अर्थात् गतिमान। ये साधु सदैव चलते-फिरते रहते हैं। एक स्थान पर अधिक नहीं ठहरते। ये अपने संप्रदाय का सिद्धांत-शिव और शक्ति एक हैं का संदेश समाज में देते रहते हैं। इनके यजमान महंत, मण्डलेश्वर महामण्डलेश्वर ही होते हैं। वे ही इनको भरपूर दक्षिणा देते हैं। ये साधु शिव शक्ति के एकत्व का सिद्धांत शिवपुराण के निम्न श्लोक के भावार्थ में देते हैं -

चन्द्रो न खलु भात्येष यथा चन्द्रिका विना।
न भाति विद्यमानो अपि शक्त्या विना शिवः।।

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 56

प्रभया हि विना यद्वत् भानुरेष न विद्यते।
प्रभा न भानुना तेन, सुतरां तदुपाश्रया ।।
एवं परस्परापेक्षा शक्तिशक्तिमती स्थिता।
न शिवेन विना शक्तिः न शक्त्या च विना शिव :।।
(शिव. पु. वायव्य सं. उत्तर खंड 4,
श्लोक 10-12)

भावार्थ–'जैसे चंद्रिका के बिना ये चंद्र सुशोभित नहीं होते, उसी प्रकार शिव विद्यमान होने पर भी शक्ति के बिना सुशोभित नहीं होते।'

जैसे सूर्यदेव कभी प्रभा के बिना नहीं रहते और प्रभा भी उन सूर्यदेव के बिना नहीं रहती, निरंतर उनके आश्रय में रहती है उसी प्रकार शक्ति और शक्तिमान को सदा एक दूसरे की अपेक्षा होती है। न तो शिव के बिना शक्ति रह सकती है और न शक्ति के बिना शिव ।

शक्ति के बिना शिव केवल शव है। 'शिव' शब्द में से इकार हटा दें तो केवल शव शब्द रह जाता है।'

शिव पुराण के अनुसार शक्ति का जन्म शिव से ही हुआ है। शिव ने अपने अंगभूत स्वरूप से शक्ति का प्राकट्य किया है। यह शक्ति ही माया, महामाया, योगमाया, मूल प्रकृति त्रिगुणा के नाम से जानी जाती है। भगवान् रामकृष्ण परमहंस मातृ रूप में ब्रह्मोपासना के लिए चंद्र और चंद्रिका के अभेद संबंध का ही उदाहरण देते थे।

श्री शैलम्, अद्वैत वेदांत का साक्षात् स्वरूप है। यह स्थान शिवतनय श्री कार्तिकेय की तपोस्थली रहा है। पौराणिक आख्यान के अनुसार किन्ही कारणों से कार्तिकेय कैलाश से रुष्ट होकर ' श्री पर्वत' जिसे उस काल में 'क्रौंच पर्वत' कहते थे, आकर रहने लगे। पुत्र प्रेम के कारण हर पूर्णिमा को पार्वतीजी यहाँ आती और हर अमावस्या को शिव साक्षात यहाँ आते। इस पर कार्तिकेय जी ने निवेदन किया कि आप दोनों एक ही स्वरूप में यहाँ विराजें, इससे शिव पार्वती, मल्लिकार्जुन स्वामी के रूप में यहाँ विराज गए। कार्तिकेय जी की दक्षिण में बहुत मान्यता है। स्कंद सुब्रमण्यम, दत्तात्रेय इन्ही के नाम हैं।

## 'श्रीशैलम्'- दिव्य धाम, उत्तम व्यवस्थाएं

हमारी जीवन संगिनी के द्वादश ज्योतिर्लिंगों के दर्शनों के संकल्प की पूर्ति में यह ग्यारहवाँ दर्शन था। सभी ज्योतिर्लिंगों पर गंगाजल का अभिषेक करने का उनका मन था। कोटा से जयपुर-मैसूर सुपरफास्ट से दिनांक 17 अगस्त,2017 को हैदराबाद के काची गुढ़ा पहुँचे। प्रातः बस से श्रीशैलम् के लिए प्रस्थान किया। श्री शैलम् हैदराबाद से 225 कि.मी. है, टैक्सी, बस सभी से 6 घंटे लगते हैं। 90 कि.मी. की पहाड़ी मार्ग की यात्रा है। नागार्जुन सागर से ही पहाड़ी

श्रीमत् आदि श्री शंकराचार्य मंदिर, पंचधारा

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 57



शुरू हो जाती है। रास्ते में अमराबाद बाघ संरक्षण योजना का अभ्यारण्य भी है। सारा मार्ग सुरम्य जैविक तथा वानस्पतिक विविधताओं से पूर्ण है। सह्याद्री का यह अंचल बड़ा मनोरम है। श्री शैलम् से पूर्व कृष्णा नदी पर बना 'श्रीशैलम बाँध' है। बाँध का दृश्य बड़ा मानोहरी है। रोप-वे से वहाँ जाने की व्यवस्था है।

यात्रियों के निवास की अच्छी व्यवस्थाएँ हैं। 'मल्लिकार्जुन भ्रमारम्भा देवस्थानम्' की ओर से अनेक भवन बहुत ही उचित किराये पर उपलब्ध हैं। 'ऑन लाईन आरक्षण' की सुविधा भी उपलब्ध है। आटो टैक्सी का किराया भी उचित है। 350/400 रुपये मे सभी स्थानों का दर्शन करा देते हैं। प्रातः 8.00 बजे से दूसरे दिन 8.00 बजे तक चैक आउट समय है। भोजन आदि सस्ते हैं। मंदिर में दर्शनों की व्यवस्था ठीक है। अभिषेक कराने में सभी मर्यादाओं और परंपराओं का पालन होता है। श्रद्धालु अपने हाथ से गर्भगृह में जलाभिषेक करते हैं।

## श्रीमत् आदिशंकराचार्य की तपोस्थली

आदि शंकाराचार्य ने भी श्री शैलम् में तपस्या की और यहाँ उनके मुख से 'सौंदर्य लहरी' तथा 'शिवानंद लहरी' जैसी दिव्य रचनाओं का स्फुरण हुआ। यह स्थान श्री शैलम् मंदिर से 5 कि.मी. दूर 'पंचधारा' और 'पाला धारा' स्थान पर है। समतल भूमि से 142 सीढ़ी नीचे घाटी में यह स्थान है। यहाँ पहाड़ में से पाँच धाराएँ निर्मल जल की सतत् बहती रहती हैं। यहाँ आदि शंकराचार्य जी ने तप किया था। एक छोटी मढ़िया में शंकराचार्य जी की प्रतिमा यहाँ विराजित है। मुख्य भूमि में शंकराचार्य का भव्य स्मारक बनाना चाहिए, जिसका अभी अभाव है, क्योंकि श्री शैलम ही वह स्थान है जो अद्वैत वेदांत का मूर्त रूप है। यहाँ ही आदि शंकराचार्य ने 'सौंदर्य लहरी' का स्फुरण किया था, जिसमें उन्होंने कहा – बिना शक्ति के शिव शव है -

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुम।
न चेते देवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि ।।

-शक्ति से युक्त होने पर ही शिव प्रभावशाली हैं। शक्ति की रंजना न होने पर उनमें कोई संचार और गति नहीं है। शिव बिना शक्ति के अथवा 'शि' से शक्तिरूप 'इकार' हटाने से 'शव' शेष रह जाता है जो प्राणहीन है। आदि शंकराचार्य (सौंदर्य लहरी)।

### छत्रपति शिवाजी स्फूर्ति केंद्र :

शिवाजी महाराज के संरक्षण में भी यह दिव्य धाम रहा हैं । उन्होंने ही उत्तरी गोपुरम् का निर्माण कराया था। शिवाजी के आदर्श को जन सामान्य में परिचित कराने के उदेद्श्य से रा. स्व. संघ के कार्यकर्त्ताओं ने यहाँ 'छत्रपति शिवाजी स्फूर्ति केंद्र' के रूप में एक प्रकल्प चला रखा है। इसमें एक भव्य भवन में शिवाजी के व्यक्तित्व और कृतित्व को दर्शाने वाली प्रदर्शिनी है। अतिथि आवास गृह है। यहाँ समय-समय पर विभिन्न कार्यक्रम आयोजित होते रहते हैं। इस संस्थान के निदेशक डॉ. श्री नागेश्वरराव बहुत सहज, सरल, सात्विक सौम्य व्यक्तिव के धनी हैं। साक्षी गणपति तथा हाटकेश्वर महादेव भी दर्शनीय स्थान हैं।

श्री शैलम् में एक विचित्रता अवश्य है। सड़क के दोनों ओर बहुत दूर-दूर तक कब्रें हैं। शायद निर्धारित कब्रिस्तान न होने के कारण जिसको जिसने जहाँ चाहा दफना दिया हो।

हिंदू धर्म के प्रतिनिधि दर्शन तथा चिंतन 'अद्वैत' भाव का यह अनुपम तीर्थ श्री मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिंग है। सभी श्रद्धालुओं को तो अवश्य ही, और पर्यटन प्रेमियों को भी एक बार इस दिव्य घाम की यात्रा अवश्य करनी चाहिए।

**लेखक भारतीय दर्शन के मर्मज्ञ विद्वान हैं।**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 58

घी ग्वार (एलोवेरा) भारत में सर्वत्र पाया जाने वाला बहु उपयोगी औषधीय पौधा है। इसमें सूखा सहन करने की विलक्षण क्षमता है। बागवानी के शौकीन इसे घरों में भी लगाते हैं। आयुर्वेद में इसके औषधीय गुणों का विशद् उल्लेख है। अमेरिका में तो इसके औषधीय गुणों पर विशेष शोध हो रहा है और इसकी उपयोगिता को देखते हुए वहाँ 'अमेरिकन अलो रिसर्च ऑर्गेनाइजेशन' का गठन भी हुआ है। यूरोप में इस पर सैकड़ों पेटेंट लिए जा चुके हैं। औषधियों का महाराजा कहे जाने वाले ग्वार पाठा के गुणों के बारे में बता रहे हैं, प्रख्यात वनस्पति वैज्ञानिक डॉ. एस. के. उपाध्याय –

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 59



डॉ. एस. के. उपाध्याय

# औषधियों का महाराजा घी ग्वार

घी ग्वार (घृत कुमारी, ग्वार पाठा, एलोवेरा Aloevera मात्र एक साधारण पौधा नहीं है। जितने गुण घी ग्वार में है, शायद ही किसी और जड़ी-बूटी में एक साथ इतने गुण पाए जाते हैं। इसे कई नाम से पुकारा जाता है, कुछ इसे संजीवनी बूटी तो कुछ इसे साइलेंट हीलर तथा चमत्कारी औषधि आदि भी कहते हैं। प्राचीन काल से ही लोग इसे औषधि के रूप में प्रयोग करते आ रहे हैं। वर्तमान में घी ग्वार का उपयोग अनेक प्रकार की आयुर्वेदिक व यूनानी औषधियों और सौंदर्य प्रसाधनों में बहुतायात से हो रहा हैं। कोई भी वैद्य, चिकित्सक व हकीम इनके गुणों को नकार नहीं सकता है।

कब्ज से लेकर कैंसर तक के मरीजों के लिए एक अत्यंत लाभकारी औषधि है। घी ग्वार बढ़िया एंटीबायोटिक और एंटसेप्टिक के रूप में काम करता है। जोड़ों के दर्द में घी ग्वार के रस का सेवन सुबह-शाम करें और इसे प्रभावित जोड़ों पर लगाने से विशेष फायदा होता है। हृदय रोग होने का मुख्य कारण मोटापा व कोलेस्ट्रोल का बढ़ना और रक्तवाहिनियों में वसा का जमाव होना है। ऐसी स्थिति में इसका रस बेहद फायदेमंद है। बालों के लिए भी इसके रस को सिर में लगाने से बाल मुलायम, धने, काले व बालों का झड़ना बंद होता है। घी ग्वार जेल चेहरे पर लगाने से मुहांसे, झाइयाँ दूर होती है। त्वचा सुंदर तथा युवा बनी रहती है।

घी ग्वार में शरीर की अंदरुनी सफाई करने और शरीर को रोगाणु रहित रखने के गुण भी मौजूद है। यह हमारे शरीर की छोटी-बड़ी नस व नाड़ियों की सफाई करता है उनमें नवीन शक्ति तथा स्फूर्ति भरता है। हर उम्र के लोग इसका इस्तेमाल कर सकते हैं। यह शरीर में मौजूद हृदय विकार, जोड़ों के दर्द, मधुमेह, मूत्र संबंधी समस्याओं, शरीर में जमा विषैले पदार्थ इत्यादि को नष्ट करने में मददगार है। इसके प्रयोग से बीमारियों से मुक्त रहकर लंबी उम्र तक स्वस्थ रहा जा सकता है।

**घी ग्वार के औषधीय प्रयोग :**

● पीलिया रोग से ग्रसित रोगी के लिए यह एक रामबाण औषधि है। 15 ग्राम एलोवेरा का रस सुबह-शाम पीएँ। आपको इस रोग में फायदा मिलेगा। मूत्र संबंधी रोग या गुर्दों की समस्या हो तो घी ग्वार फायदा पहुँचाता है। इसका गूदा या रस का सेवन करें।

● घी ग्वार का गूदा चेहरे पर लगाने से चेहरा सुंदर और चमकदार बन जाता है। पुरुष हों चाहे स्त्री दोनों को इसका पेस्ट चेहरे पर लगाना चाहिए। यह पूर्णरूप

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 60

से प्राकृतिक क्रीम है। यदि सिर में दर्द हो तो आप हल्दी में 10 ग्राम घी ग्वार मिलाकर सिर पर इसका लेप लगाएँ ऐसा करने से सिर दर्द में राहत मिलती है और ताजगी का एहसास होता है।

● घी ग्वार मोटापा कम करने में फायदा करता है। 10 ग्राम घी ग्वार के रस में मेथी के ताजे पत्तों को पीसकर उसे मिलाकर प्रतिदिन सेवन करें या 20 ग्राम के रस में 4 ग्राम गिलोय का चूर्ण मिलाकर एक महीने तक सेवन करने से मोटापे से राहत मिलती है।

● यह एक तरह का प्राकृतिक कंडीशनर है। इसको बालों पर 20 मिनट तक ऊंगलियों के द्वारा बालों पर लगाते रहें, और थोड़ी देर में पानी से बालों को धो लें। यह बालों को सुंदर, घना और आकर्षक बनाता है।

● मधुमेह की समस्या से परेशान हैं तो 10 ग्राम घी ग्वार के रस मे 10 ग्राम करेले का रस मिलाकर कुछ दिनों तक सेवन करने से डायबिटिज से मुक्ति मिलती है। 20 ग्राम आंवले के रस मे 10 ग्राम घी ग्वार के गूदे को मिलाकर प्रतिदिन सुबह सेवन करें। यह मधुमेह की बीमारी को दूर करता है।

● आग से शरीर का कोई अंग जल या झुलस गया हो तो आप इसका गूदा उस जगह पर लगाएँ। आपको जलन से राहत मिलेगी और घाव भी जल्दी ठीक होगा। निशान भी नहीं पड़ेगा।

● सर्दी जुकाम या खाँसी होने पर शहद में 5 ग्राम घी ग्वार के ताजे रस में मिलाकर सेवन करें। आपको फायदा होगा। शरीर में कैल्शियम की कमी हो, तो घी ग्वार के गूदे का सेवन जरूर करें।

● बवासीर में यदि खून बहता हो तो घी ग्वार के पत्तों का सेवन 25-25 ग्राम की मात्रा में सुबह-शाम करते रहें। बवासीर के मस्से खत्म करने के लिए घी ग्वार के गूदे में नीम की पत्तियों को जलाकर उसकी राख मिला लें और इस पेस्ट को मलद्वार पर बाँध लें।

● खुजली, मुँहासों और फुंसी होने पर प्रतिदिन 10 से 15 ग्राम घी ग्वार का रस पीना चाहिए। यह खून को शुद्ध करता है और चेहरे से मुँहासों को भी हटा देता है। दाद होने पर 10 ग्राम अनार के रस में 10 ग्राम घी ग्वार रस मिलाकर दाद वाली जगह पर लगाने से दाद ठीक हो जाते हैं।

● पेट संबंधी कोई भी बीमारी हो तो 20 ग्राम घी ग्वार के रस में शहद और नींबू मिलाकर उसका सेवन करें। यह पेट की बीमारी को दूर करता है साथ ही पाचन शक्ति को भी बढ़ाता है।

**घी ग्वार का रस बनाने की विधि**- सबसे पहले पत्तियों को अच्छी तरह से धो लें। उसके बाद चाकू से उसके किनारे के काटे वाले भाग को काट कर निकाल दें। अब पत्तियों को सुविधानुसार छोटे-छोटे टुकड़ों में काट लें, फिर पत्तियों के टुकड़े लेकर ऊपर का हरा वाला छिलका निकाल कर अलग कर दें। ध्यान रहे ऐसा करते समय पत्तियों के गूद्दे के ऊपर की पीले रंग की पर्त भी साथ में निकाल दें। नहीं तो रस में कड़वाहट रह जाएगी और आप उसका सेवन नहीं कर सकेंगे।

घी ग्वार के सफेद भाग को अलग करने के बाद उसे मिक्सी में डालें और दो मिनट के लिए मिक्सी को चला दें। इससे घी ग्वार की पत्तियों का गूद्दा रस में बदल जाएगा। अब इसे गिलास में निकालें और इसमें फलों का रस भी मिला सकते हैं। इससे एलोवेरा जूस स्वादिष्ट हो जाएगा और आपको पीने में दिक्कत नही होगी।

**लेखक केंद्रीय आयुर्वेद एवं सिद्ध अनुसंधान परिषद् नई दिल्ली के पूर्व सदस्य व प्रसिद्ध वनस्पति वैज्ञानिक हैं।**

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 61



# मनोगत

**मान्यवर महोदय,**

आपको मकर सक्रांति की हार्दिक शुभकामनाएँ। हमारे लिए बहुत ही संतोष की बात है कि आपकी सद्भावनाओं एवं सहयोग के बल पर 'मंगल विमर्श' अपने प्रकाशन के तीन वर्ष पूर्ण कर चौथे वर्ष में प्रवेश कर रहा है। 'मंगल विमर्श' का जनवरी 2018 का अंक आपके हाथों में सौंपते हुए प्रसन्नता की अनुभूति हो रही है। आशा है कि भविष्य में भी आपका सहयोग इसी प्रकार मिलता रहेगा।

'मंगल सृष्टि' द्वारा आयोजित की जाने वाली द्विमासिक संगोष्ठियों के क्रम में 19 नवंवर 2017 को **'भारतीय इतिहास के स्रोत पुराण साहित्य'** विषय पर दिल्ली विश्वविद्यालय में संस्कृत के प्रोफेसर डॉ. रमेश भारद्वाज जी ने अपने गवेषणापूर्ण संबोधन में कहा कि पाश्चात्य विद्वानों ने भारतीय संस्कृत साहित्य का अध्ययन तो किया परंतु उन्होंने इसकी जो समीक्षा लिखी उनमें से कई विद्वानों की दृष्टि भारतीय सांस्कृतिक चिंतन के अनुरूप नहीं थी। इसी कारण भारतीय साहित्य और संस्कृति को लेकर पश्चिम में अनेक तरह की भ्राँत धारणाएँ पनपी। ऐसी ही एक धारणा पुराण साहित्य को लेकर भी है। पुराणों के संबंध में प्रचारित किया गया कि ये कपोल कल्पनाओं पर आधारित हैं और इनका इतिहास से कोई लेना देना नहीं हैं। परंतु जब हम वैदिक वाङ्मय का गहन अध्ययन करते हैं तो ज्ञात होता है कि वैदिक काल में यज्ञ के समय होने वाले प्रवचनों में प्राचीन राजाओं की गाथायें (आख्यान) सुनायी जाती थी।

'अथ नवमेऽहन् ... तानुपदिशति
पुराणं वेदः सोऽयमिति किञ्चित्
पुराणमाचक्षीत *(शतपथ ब्राह्मण, 13/4/3-12)*

उन्हीं ब्राह्मण-साहित्य में वर्णित पुरुरवा-उर्वशी आदि आख्यानों का पुराणों में विस्तरशः वर्णन है। संभवतः स्मृतिकाल में इसी परंपरा का पितृकर्म आदि में भी विनिवेश हो गया, जैसाकि भगवान् मनु कहते हैं–

स्वाध्यायं श्रावयेत् पित्र्ये धर्मशास्त्राणि चैव हि।
आख्यानानीतिहासांश्च पुराणानि खिलानि च ।।
*(मनुस्मृति 3/232)*

इस प्रकार पुराण उतने ही पुराने हैं, जितना कि हमारी संस्कृति। अगर वेदों को समझना है तो हमें अपने इतिहास ग्रंथ पुराणों को समझना होगा।

'इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत' इति ।
*(म. भा. आदिपर्व 1/267)*

भारतीय परंपरा में पुराणों के विषय पाँच हैं–

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् ।।

1. सर्ग- सृष्टि, 2. प्रतिसर्ग- प्रलय, 3.वंश- संसार के जो उपादान कारण, उनकी क्रमिक परंपरा का वर्णन 4. मन्वन्तर - सृष्टि के प्रारंभ से प्रलय-पर्यंत की काल-गणना, 5. वंशानुचरित - ऋषि, राजा आदि के वंश और उनका चरित।

हमने अपने भारतीय इतिहास को विभिन्न कालखंडों में विभाजित किया है। जो कि इतिहास की दृष्टि से

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 62

मंवंतर पर आधारित है। सृष्टि के प्रारंभ से लेकर आज तक जो भारतीय कालगणना है वह इतिहास के दृष्टि से ही है। वंशानुचरित अर्थात् ऋषियों व राजाओं के वंश का उल्लेख करना पुराणों का विषय है। इनसे भारतीय वैदिक संस्कृति और इतिहास के दर्शन होते हैं। भारतीय वाङ्मय परंपरा के अनुसार रामायण और महाभारत महत्त्वपूर्ण इतिहास ग्रंथ हैं। किंतु हम पश्चिम के प्रभाव के कारण रामायण को इतिहास-ग्रंथ न मान कर केवल आदिकाव्य माने हैं। रामायण में जहाँ रामचरित्र का वर्णन हैं वहीं महाभारत में विभिन्न चरित्रों की गाथा है। भारतीय दृष्टि से मर्यादा पुरुषोत्तम राम ऐतिहासिक व्यक्तित्व हैं। इस संबंध में आचार्य राजशेखर के कथन का उल्लेख करना आवश्यक है–

परिक्रिया पुराकल्प इतिहासगतिर्द्विधा।
स्यादेकनायका पूर्वा द्वितीया बहुनायका ।।

अर्थात् वाल्मीकि रामायण एक नायकत्व चरित्र वाली तथा महाभारत बहुनायकत्व चरित्र वाला इतिहास ग्रंथ हैं।

भारतीय चिंतन परंपरा की एक और विशेषता यह है कि यह जीवन के किसी एक पक्ष मात्र की व्याख्या नहीं करती अपितु जीवन के सभी अंगों–अर्थ, संस्कृति, समाज आदि के क्रमिक विकास का वर्णन भी करता है। पूर्व में पुराणों के जहाँ पाँच लक्ष्ण बताए गए हैं वहीं भागवत् में पुराणों के 10 लक्षणों का उल्लेख है–

अत्र सर्गो विसर्गश्च स्थानं पोषणभूतयः ।
मन्वन्तरेशानुकथा निरोधो मुक्तिराश्रयः ।।
*भागवत (स्कन्ध-2ए, अध्याय-10, श्लोक-17)*

1. सर्ग -भूत, तन्मात्रा इंद्रिय बुद्धि आदि की उत्पत्ति, 2. विसर्ग- गुणों की विषमता से सृष्टि, 3. स्थान (वृत्ति)- भगवान् की विजय, 4. पोषण - भगवान का अनुग्रह, 5. भूति- कर्मो की वासना, 6. मन्वन्तर- मन्वन्तरों के धर्म, 7. ईशानुकथा- अवतारवाद, 8. निरोध- प्रयल, 9. मुक्ति- स्वरूप में अवस्थान, 10. आश्रय- बंध, मुक्ति आदि का कारण परब्रह्म।

इन पाँच तथा दस लक्षणों के अतिरिक्त पुराणों में राजनीतिक इतिहास के साथ ही सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, वैज्ञानिक व तकनीकी विषयों का भी विस्तार से वर्णन मिलता है। पुराणों में आदिकाल से वाकाटक-गुप्तकाल तक के राजवंशों का विस्तृत वर्णन है। जो प्राचीन भारत के राजनीतिक इतिहास को दर्शाता है।

**पुराणों की प्रामाणिकता :** पुराणों की प्रामाणिकता को समझने के लिए भारतीय दृष्टि को समझना पड़ेगा। कुछ विद्वान इस आधार पर पुराणों की प्रामाणिकता पर प्रश्न उठाते हैं कि उनमें पुरानी घटनाओं व विषयों के अतिरिक्त बाद की घटनाओं का भी समावेश किया गया है। परंतु ऐसी शंका करने वाले विद्वान यह बात भुला देते हैं कि भारतीय वाङ्मय की रचना का आधार आर्ष परंपरा है। इस परंपरा में ग्रंथ का मूल तत्त्व एक ही रहता है परंतु समय के साथ-साथ उसमें युगानुकूल नए विषयों को भी समाहित कर लिया जाता है। पुराणों की प्रामाणिकता को सुनिश्चित करने के लिए इस बात का ध्यान रखा जाता है कि जो बात वेद विरुद्ध है वह प्रामाणिक नहीं है।

भारतीय परंपरा में काल निर्धारण युगाब्द के अनुसार होता है। इस आधार पर महाभारत के बाद कलियुग का प्रारंभ हुआ। कालनिर्धारण के लिए युगाब्द की अवधारणा बहुत ही वैज्ञानिक है। जबकि पश्चिम के विद्वान हमारी कालगणना को नहीं मानते। इसके विपरीत मेरा मानना है कि आज का कोई भी अनुसंधान जब परंपरा से मेल खाए तभी उसे प्रामाणिक मानना चाहिए।

पुराणों की प्रामाणिकता को लेकर पश्चिम के विद्वानों में भी बहुत ही मतभेद हैं। कीथ और मैक्डोनल पुराणों के संदर्भों को परिशुद्ध नहीं मानते। इसके विपरीत

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 63



डॉ. ए डी पुसलकर ने पुराणों में दी गई वंशावलियों का अध्ययन करने के उपरांत उन्होंने पुराणों को भारतीय इतिहास के स्रोत के रूप में स्वीकार किया है। उन्होंने लिखा कि–

"The evidence of the Puranas, on the other hand, cannot be ruled out altogether, because despite a good deal of what is untrustworthy in them, they alone contain smoething like a continuous historical narrative, and it is absurd to suppose that the elaborate royal genealogies were all merely figments of imagination or a tissue of falsehoods."

इसी प्रकार एफ. ई. पर्जीटर (F. E. Pargiter) ने पुराणों में उपलब्ध तथ्यों के आधार पर दो ग्रंथ लिखे- 'एन्शॅन्ट इंडियन हिस्टोरिक्ल ट्रेडिशन' और 'द पुराणा टेक्सट ऑफ द डायनस्टिज ऑफ द कली एज'। दूसरी कृति में 600 ईसा पूर्व से चतुर्थ शती ईस्वी तक के राजाओं को श्रेणिबद्ध किया है।

डॉ. ब्रेग का मानना है- ''The old epics and Puranic legends grew up in part at the courts of kings, where they were rectied by professional bards or minstrels known as Sutas. The Vayu and Padma Puranas tell us how ancient genealogies, tales and ballads were preserved by the sutas and they describe the Suta's duty. Mahabharata also refers to the appointment of Suta as a minister well-versed in the Puranas and gifted with the eight virtues.

भारतीय विद्वानों ने भी पुराणों का गहन अध्ययन किया है। डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल ने 'हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन' में सम्राट हर्षवर्धन (7वीं शताब्दि) के शासनकाल की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए लिखा है कि उस समय भारत में विज्ञान और तकनीक विषय कितने उन्नत थे। उन्होंने 'मत्स्य पुराण- ए स्टडी' 'विमान पुराण- ए स्टडी' और 'मार्कण्डेय पुराण- एक अध्ययन' आदि ग्रंथों में पुराणों की ऐतिहासिकता और भारतीय सांस्कृतिक इतिहास पर विशेष प्रकाश डाला है।

**पुरातात्विक प्रमाण :** इतिहास लेखन की दृष्टि से पुरातात्विक प्रमाण प्रमाणिक माने जाते हैं। इस संबंध में ए.बी.एल अवस्थी ने 'ए स्टडी इन द स्कन्द पुराण, पार्ट-1' में स्पष्ट रूप से कहा है कि स्कन्द पुराण उत्तर भारत, पल्लव, कोल और पांडियों के इतिहास के अध्ययन के लिए एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। पुराणों में महाभारत युद्ध के बाद के राजवंशों के इतिहास को सुरक्षित रखा है। पिछली शताब्दियों में हुए पुरातात्विक उत्खनन में कई राजाओं से संबंधित सिक्के, मोहरें आदि भी प्राप्त हुए हैं। उनके तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट है कि पुराणों में ऐतिहासिक तथ्यों को सुरक्षित रखा गया है और यह नहीं कहा जा सकता कि पुराण आधारहीन हैं। अतः भारतीय समाज पर यह आरोप लगाना सही नहीं है कि हमारी कोई इतिहास-दृष्टि नहीं थी।

**पुराण रचना का उद्देश्य :** वेदों के तथ्य को समाज तक पहुँचाना पुराणों का उद्देश्य रहा है–

'वेदार्थादधिकं मन्ये पुराणार्थ वरानने।
वेदाः प्रतिष्ठिताः सर्वे पुराणे नात्र संशय :।।

*(नारदपुराण 1/4/17)*

भारतीय संस्कृति में जीवन का लक्ष्य चार पुरुषार्थों –धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष के रूप में स्थापित किया है। इस आधार पर भारतीय चिंतन में मानव जीवन के सर्वांगीण विकास का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। मानव मात्र का परमोत्कर्ष (किसी एक वर्ग विशेष का उत्कर्ष नहीं) भारतीय संस्कृति का लक्ष्य रहा है। इसी

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 64

लक्ष्य के दृष्टिगत पुराणकारों ने पुराणों में समाज के संचालन के लिए आवश्यक सभी विद्याओं का समावेश किया है। यही नहीं वैश्विक सभ्यता के निर्माण में भारतीय संस्कृति के योगदान का उल्लेख भी पुराणों में मिलता है। इस प्रकार भारत के राजनीतिक, सामाजिक व वैज्ञानिक इतिहास के निर्माण में पुराणों की विशिष्ट उपयोगिता है।

इस अवसर पर सर्वश्री सुभाष जिंदल, आनन्द आदीश, डॉ सुधीर सिंह, मुन्ना लाल जैन आदि ने इस बात पर बल दिया कि पुराणों के संबंध में फैली भ्राँतियों का निवारण करने और युवा पीढ़ी को अपने वाङ्मय से अवगत कराने के लिए विश्वविद्यालयों व सरकार को विशेष प्रयास करने चाहिएँ।

'मंगल विमर्श' के प्रधान संपादक श्री ओमीश परुथी ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में कहा कि प्रोफेसर भारद्वाज ने अपने संबोधन में पुराणों के संबंध में प्रचलित सभी दृष्टियों को हमारे सम्मुख रखा है। चिंता की बात है कि आधुनिक युवा समाज अभी भी पुराणों को आधारहीन मानता है। इसके विपरीत एक बहुत बड़ा वर्ग ऐसा भी है जिसकी 'भागवत पुराण' पर आगाध श्रद्धा है। लगता है कि पुराणों के संबंध में हमारी जो मान्यताएँ बनी हैं वे सुनी-सुनाई बातों पर अधिक हैं। वास्तव में पुराणों में सृष्टि-सृजन, देवताओं, राजाओं की वंशावलियों, कृषि, वास्तुशास्त्र, चिकित्सा विज्ञान, काव्यशास्त्र, वनस्पति शास्त्र, जीव शास्त्र आदि का विस्तृत उल्लेख है। पुराण विकसनशील हैं इसलिए इनमें समय के साथ-साथ संवर्धन और परिवर्तन होता रहा है। यही कारण है कि पुराणों में पुराने आख्यानों के साथ-साथ नये विषयों का भी उल्लेख मिलता है।

मंगल सृष्टि के अध्यक्ष डॉ. बजरंग लाल गुप्ता ने अपने समापन संबोधन में कहा कि प्रोफेसर भारद्वाज ने अपने विवेचन में हमें दृष्टि दी कि पुराणों में भी इतिहास है। यह विषय बहुआयामी है और इस पर और अधिक कार्य करने की आवश्यकता है। इस कार्य को करने की जिम्मेदारी हमारी अपनी भी है। सभी कार्य सरकार नहीं कर सकती और समाज को भी अपना दायित्व निभाना चाहिए। इससे पहले भी समाज ने बहुत काम किया है। यही नहीं बहुत से कार्य तो ऐसे हैं जो किसी संस्था ने नहीं, अपितु व्यक्ति ने अपनी साधना के बल पर किये हैं।

कुछ लोगों ने जानबूझकर भारतीय परंपरा को ध्वस्त करने का कार्य किया है। आवश्यकता इस बात की है कि इस ज्ञान परंपरा को आगे बढ़ाया जाए। यदि व्यक्तिगत रूप से कोई अध्ययन नहीं कर सकता तो उसे उन संस्थाओं और व्यक्तियों को सहयोग देना चाहिए जो इस कार्य में लगे हैं।

श्री वेदप्रकाश गुप्ता ने गोष्ठी में आगंतुक विद्वतजनों का आभार व्यक्त किया।

**स्नेहाकांक्षी**
**आदर्श गुप्ता**
**प्रबंध संपादक**


**'मंगल विमर्श' पत्रिका का स्वामित्व संबंधी विवरण**

| | | |
|---|---|---|
| 1. प्रकाशन स्थान | : | सी-84, अहिंसा विहार, सेक्टर-9, रोहिणी, दिल्ली-110084 |
| 2. प्रकाशन अवधि | : | त्रैमासिक |
| 3. मुद्रक का नाम | : | आदर्श गुप्ता |
| क्या भारत का नागरिक है | : | हाँ |
| पता | : | बी-170, प्रियदर्शिनी विहार, दिल्ली-92 |
| 4. प्रकाशक का नाम | : | आदर्श गुप्ता |
| पता | : | बी-170, प्रियदर्शिनी विहार, दिल्ली-92 |
| 5. संपादक का नाम | : | सुनील पांडेय |
| पता | : | 120-वार्तालोक अपार्टमेंट, वसुंधरा, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश |
| 6. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों | : | मंगल सृष्टि |

मैं आदर्श गुप्ता एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिए गए विवरण सत्य है।

दिनांक : 01 जनवरी, 2018 आदर्श गुप्ता
(प्रकाशक के हस्ताक्षर)

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:51 PM Page 65



# सहयोगी वृंद

1. **श्री अतुल गुगलानी**
318, तरुण एन्क्लेव, पीतम पुरा
दिल्ली-110034

2. **श्री सुनील गुप्ता**
212, तरुण एन्क्लेव, पीतम पुरा
दिल्ली-110034

3. **श्री राजेंद्र बंसल**
217, तरुण एन्क्लेव, पीतम पुरा
दिल्ली-110034

4. **श्री सतपाल बंसल**
148, तरुण एन्क्लेव, पीतम पुरा
दिल्ली-110034

5. **श्री राम गोपाल गोयल**
139, तरुण एन्क्लेव, पीतम पुरा
दिल्ली-110034

6.**श्री संदीप कुमार**
मकान नं. 212, बीजेजी-III विकासपुरी
नई दिल्ली-110018

7. **श्री गंगाराम भट्ट**
903, टीडीआई, सोनीपत
हरियाणा-131028

8. **श्री आशीष गोयल**
ए.एन-42, शालीमार बाग
दिल्ली -110088

9. **श्री उमेश राज**
मकान नं. 1/803, किंग्स ब्वॉय अपार्टमेंट
टीडीआई सीटी, कुंडली,
सोनीपत, हरियाणा -131028

10. **श्री दिनेश चौहान**
डी-202, स्वराज्य जयंती पुरम्
गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश-201013

11. **श्री भरत मिश्रा**
फ्लैट नं. 801, टावर नं. 8, टीडीआई कुंडली
सोनीपत, हरियाणा-131028

12. **श्री पी.एस. तिवारी**
226, सेक्टर-9, पॉकेट-3, नरेला
दिल्ली-110040

13. **डॉ. अजय गोयल**
हरियाणा एग्रो इंडस्ट्रीयल कॉरपोरेशन,
रिसर्च स्टेशन, मूरथल, सोनीपत, हरियाणा

MV_January_2018:Layout 1 12/20/2017 12:52 PM Page 66

# मंगल विमर्श

## सदस्यता -प्रपत्र

**मंगल विमर्श** त्रैमासिक पत्रिका

मुख्य संरक्षक
डॉ. बजरंगलाल गुप्ता

प्रधान संपादक
ओमीश परुथी

संयुक्त संपादक
डॉ. रवींद्र अग्रवाल

प्रबंध संपादक
आदर्श गुप्ता

सदस्यता -शुल्क

10 वर्षों के लिए
₹2000 मात्र

पत्रिका सदस्यता शुल्क हेतु
**मंगल सृष्टि** (Mangal Srushti)
के नाम चैक/ड्राफ्ट सी-84, अहिंसा विहार,
सेक्टर-9, रोहिणी, दिल्ली- 110085 पर भेजें।
फोन नं. +91-9811166215,
+91-11-27565018

**मंगल विमर्श की**..... **वर्षों की सदस्यता हेतु**.....

**रुपये का ड्राफ्ट/चैक क्रं.** ..... **दिनांक**.....

**बैंक**..... **भेज रहे हैं,**

**कृपया**..... **वार्षिक सदस्य बनाने का कष्ट करें।**

**नाम**.....

**पता**.....

.....

..... **पिनकोड** .....

**फोन :**..... **मोबाइल:**.....

**इ-मेल**.....

**इ-मेल** mangalvimarsh@gmail.com **वेब साइट** www.mangalvimarsh.in